भक्ति-सौरभ

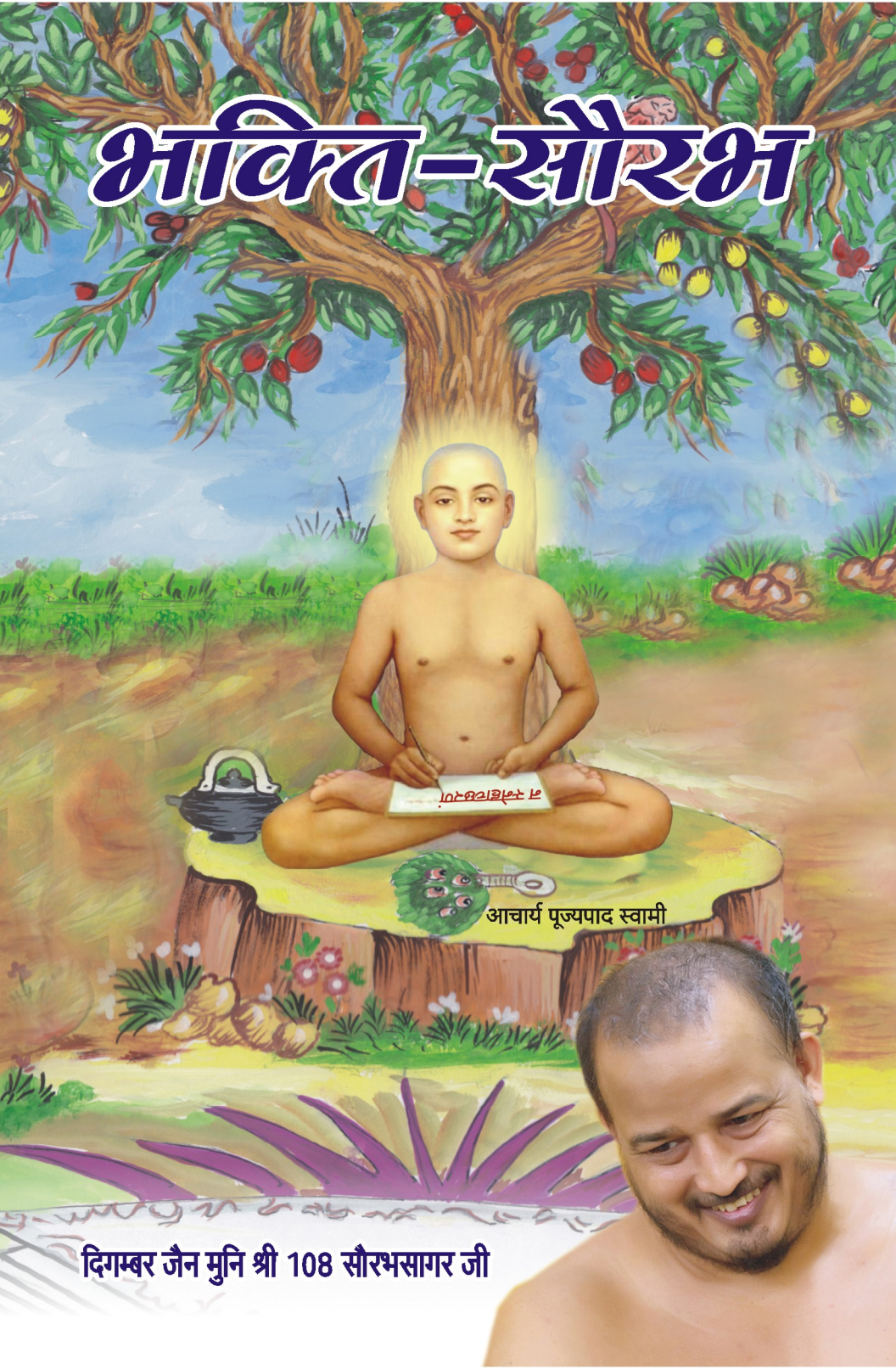

आचार्य पूज्यपाद स्वामी

दिगम्बर जैन मुनि श्री 108 सौरभसागर जी

श्री धरसेनाचार्य देव पुष्पदन्त एवं भूतबलि मुनिवरों
को षट्खण्डागम का उपदेश देते हुए।
मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमोगणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलम्।।

भक्ति-सौरभ

लेखक
दिगम्बर जैन मुनि श्री 108 सौरभसागर जी

कृति	:	**भक्ति-सौरभ**
मूल कृति	:	**श्रीमद्पूज्यपादाचार्य जी**
शुभाशीष	:	पुष्पगिरि प्रणेता परम पूज्य आचार्य श्री 108 पुष्पदंतसागर जी महाराज
पद्यानुवादक	:	**परम पूज्य मुनि श्री 108 सौरभसागर जी महाराज**
संस्करण	:	प्रथम, 2022
प्रकाशक	:	सौरभाँचल प्रकाशन (क्र. 115)
प्राप्ति स्थल	:	1. **श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र,** पुष्पगिरि, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.) फोन : 07270-22870 2. **श्री दिगम्बर जैन तीर्थ सौरभाँचल,** श्री श्रुत स्कन्ध मन्दिर, जी.टी. करनाल रोड, गन्नौर (हरियाणा) 3. **श्री दिगम्बर जैन मंशापूर्ण महावीर क्षेत्र,** **जीवन आशा हॉस्पिटल,** कावड़ मार्ग, गंगनहर, मुरादनगर (उ.प्र.)
मुद्रक	:	पारस प्रकाशन, दिल्ली मो.: 9811374961, 9811363613 pkjainparas@gmail.com, kavijain1982@gmail.com

अनुक्रमणिका

णमोकार मंत्र 5
एक ऐतिहासिक सत्य (**मंगलपुष्पदन्ताद्यो**) 6
आ. श्री देवनन्दी (पूज्यपाद) द्वारा रचित ''दशभक्ति'' 8
परमेष्ठी वंदना 10
सरस्वती वंदना 11
श्री सिद्ध भक्ति 12
श्री चैत्य भक्ति 18
श्री श्रुतभक्ति 29
श्री चारित्र भक्ति 35
श्री योगि भक्ति 39
श्री आचार्य भक्ति 43
श्री पञ्च गुरु भक्ति 47
श्री शांति भक्ति 50
श्री समाधि भक्ति 55
श्री निर्वाण भक्ति 59
श्री नन्दीश्वर भक्ति 68
श्री गुरू वंदना 83
श्री चौबीस तीर्थंकर स्तुति 85
श्री सम्मेद शिखर वंदना 90
श्री देव शास्त्र गुरु तीर्थवन्दना 93
श्री मंशापूर्ण महावीर स्तुति 95
माँ जिनवाणी वन्दना 100
श्री वीर-वीरांगज वन्दना 103

णमोकार मंत्र

णमो अरिहंताणं

णमो सिद्धाणं

णमो आयरियाणं

णमो उवज्झायाणं

णमो लोए सव्व साहुणं

एसो पंच णमोयारो, सव्व पावप्पणासणो।

मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलम॥

चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,

साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो, धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,

साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते सरणं पव्वज्जामि,

सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि,

केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि॥

एक ऐतिहासिक सत्य

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैनधर्मोस्तु मंगलम्।।

जैन धर्म में देव शास्त्र गुरु के प्रति श्रद्धा ही सम्यग्दर्शन में कारण है। चौबीस तीर्थंकर एवं 1452 गणधर तथा द्वादशांगमय श्रुतज्ञान होने के उपरांत भी वर्तमान काल में तीर्थंकर महावीर स्वामी का शासन काल होने के कारण मंगल स्वरूप वे ही हैं इसलिए **"मंगलं भगवान् वीरो"** कहकर **"दीपावली पर्व"** को महत्व दिया जाता है तथा उनके प्रथम गणधर गौतम स्वामी की दीक्षा की स्मृति को **"मंगलं गौतमो गणी"** कहकर **"गुरु पूर्णिमा"** के रूप में महत्व दिया जाता है तथा 633 वर्ष बीतने के उपरांत श्रुत विच्छेद न हो जाये इसलिए धरसेनाचार्य ने अपना अंग श्रुतज्ञान आचार्य पुष्पदंत स्वामी को समर्पित किया और कहा भी है–

जयउ धरसेण णाहो जेण महाकम्म पयडि पाहुड सेलो।
बुद्धि सिरेणुद्धरियो समप्पियो पुप्फदंतस्स।।
(ध.पु.भा.-2)

अर्थात् वे धरसेन स्वामी जयवंत हों, जिन्होंने **महाकर्मप्रकृति** प्राभृत रूपी पर्वत को अपनी बुद्धिरूपी मस्तक पर धारण करके **आचार्य पुष्पदंत** को समर्पित किया।

उनसे शिक्षित शिष्य आचार्य पुष्पदंत ने सर्वप्रथम णमोकार मंत्र को निवद्ध मंगल कर षट्खण्डागम ग्रन्थ लिखना प्रारंभ किया एवं भूतबलि आचार्य ने ग्रन्थ पूर्ण किया। इस उपलक्ष्य में **"श्रुतपंचमी"** पर्व मनाया जाता है यही ऐतिहासिक सत्य है इसलिए शुद्ध ग्रन्थ के प्रथम लेखक के रूप में ऋषि सभा के अधिपति आचार्य पुष्पदंत का

स्मरण करते हुए **"मंगलं पुष्पदन्ताद्यो"** कहा जाता है।

ये तीनों ही जैनधर्म के उत्कृष्ट मंगल स्वरूप हैं। इसलिए धवलाकार वीरसेन स्वामी ने कहा–

"तदो मूलतंत कत्ता वड्ढमाण भडारयो, अणुतंत कत्ता गौदम स्वामी उवतंत कत्तारा भूदबली पुप्फदंतादयो वीयराय दोष मोहा मुणिवरा"

(ध.पु.भा.–1, पृ:73)

मूलग्रंथ कर्ता वर्द्धमान महाराज अणुतंत कर्ता गौतम स्वामी उपतंत ग्रंथ कर्ता भूतबलि पुष्पदंतादि वीतराग दोष मोह रहित मुनिवर हैं ।

इसे ही शुद्ध दिगम्बर आगम प्रमाणानुसार निम्न श्लोक के रूप में कहा जाता है–

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैनधर्मोस्तु मंगलम्।।

आ. श्री देवनन्दी (पूज्यपाद) द्वारा रचित ''दशभक्ति''

प्रागम्यधायि गु.णा किल देवनन्दी,
बुद्धया पुनर्विपुलया स जिनेंद्र बुद्धिः।
श्री पूज्यपाद इति चैव बुधैः प्रचल्ये,
यत्पूजितः पदयुगे वन देवताभिः।।

जैन समाज में पूज्य पाद आचार्य का स्मरण बड़ी श्रद्धा के साथ किया जाता है आप विक्रम की छठी शताब्दी में हुए है, आज से 1500 वर्ष पूर्व आपका दीक्षा नाम ''देवनंदी'' था। बुद्धि की प्रकृष्टा के कारण आपको जिनेंद्र बुद्धि भी कहा गया और जबसे उनके चरण कमल देवताओं द्वारा पूजे गए तब से वे कुछ जनों के द्वारा ''पूज्यपाद'' नाम से विभूषित हुए, आपके द्वारा रचित सिद्ध, श्रुत, आचार्य, चारित्र, योग, निर्वाण, नंदीश्वर, पंचगुरु, शांति, समाधि भक्ति साधु गणों के द्वारा प्रतिक्रमण-पंचकल्याणक प्रतिष्ठा-वर्षा योगस्थापना के अवसर पर पढ़ी जाती है।

जैनेन्द्रम निज शब्द भाग मतुलं सर्वार्थ सिद्धि परा,
सिद्धांते निपुणत्व मुद्ध कवितां जैनाभिषेकः स्वरा।
छन्दः सूक्ष्म धियं समाधी शतकं स्वास्थ्यं यादीर्य विहा,
माख्यातीह स पूज्य पाद मुनियः पूज्यो मुनीनां गणै।।

(श्र.शि.न. 40)

आपके उच्च दर्जे की कुछ रचनाओं का उल्लेख करते हुए कहा है कि— जिनका ''जैनेन्द्र'' शब्द शास्त्र में आपने अतुलित भाग को ''सर्वार्थसिद्धि'' सिद्धांत में परम निपुणता को, ''जैनाभिषेक'' अर्थ दर्जे की कविता को छंद शास्त्र बुद्धि की सूक्ष्मता रचना चतुरता को और ''समाधि शतक'' स्वात्म स्थिति प्रज्ञता को संसार में विद्वानों पर प्रकट करता है ये पूज्यपाद मुनीद्र मुनियों के गणों में पूजनीय हैं।

अपाकुर्वन्ति यद्वाचः काय वाक्-चित्त संभवम्
कलंक मंगितां सोयं-देवनन्दी नमस्यते।

(ज्ञानार्णव शुभचन्द्राचार्य)

जिनके वैद्यक शास्त्र के सम्यक प्रयोग से शरीर के, व्याकरण शास्त्र से वचन के और समाधि शास्त्र से मन के विकार दूर हो जाते हैं ऐसे देवनन्दी (पूज्यपाद) आचार्य को नमस्कार है।

आपकी नेत्र ज्योति चली गई थी शान्ति भक्ति के एक निष्ठ एकाग्रता से पाठ कर पुनः नेत्र ज्योति पाई। सौभाग्य से परम् पूज्य आचार्य श्री पुष्पदंत सागर जी महाराज के चरणारविंद में 13 वर्ष की उम्र से इन भक्ति का सतत पाठ कंठस्थ करता हुआ संस्कृत में भक्ति किया वर्षों पश्चात पुष्पगिरि तीर्थ की ओर कोरोना काल में विहारोपरांत समय का सदुपयोग करता हुआ पवित्र भावों के साथ हिंदी पद्यानुवाद किया जो ''पुष्पगिरी वर्षायोग 2020'' में पूर्ण किया भक्तिवान पाठकों के लिए यह उपयोगी है।

परमेष्ठी वंदना

ओम णमो अरिहताणं जाप करो भव दु:खहरणं
मंत्र महा सुख दाता है जो जपता सुख पाता है।
जाप करो नित अघ हरणं णमो-णमो अरिहंताणं।।
है अनादि यह मंत्रेश्वर अरु द्वादशांग का ईश्वर है।
इससे निकसी है जिनवाणी दिव्य दिवाकर सा दानी
प्राणेश्वर यह भव भय भंजन नमन करो अरिहंताणं।।1।।
ओम्.....।

अलख ईश्वर नित्य निरंजन निराकार सर्वेश्वर है।
आठ गुणों को प्राप्त किये देवाधिदेव परमेश्वर है।।
मृत्युञ्जयी हो सुन लो गुंजन णमो-णमो श्री सिद्धाणं।।2।।
ओम्.....।

शान्त सरल मुद्रा के धारी निर्विकार शिशुवत् अविकारी।
गुरु ज्ञानी आचार्य हैं प्यारे दीक्षा देकर सब तारे।।
वीतराग मुद्रा अघ हरणं नमन करो आइरियाणं।।3।।
ओम्.....।

ज्ञान विकास अज्ञान ह्रास ज्ञान दाता ज्ञानेश्वर है।
परम पवित्र पावन मन जिनका वे ही प्रिय परमेश्वर हैं।।
द्वादशांग जिनका मन रंजन णमो-णमो उवज्झायाणं।।4।।
ओम्.....।

संत सनातन मन मन्दिर में सदा काल को ध्यान करे।
काम क्रोध को जीत रहे जो उनका मंगल गान करे।
परम प्रकाशी मम तम हरण नमन करो सव्वसाहूणं।।5।।
ओम्.....।

सरस्वती वंदना

माँ शारदे! आ तारदे दे! मुझमें विमल तु ज्ञान दे
हो शुद्ध जीवन! बुद्धि पावन! तु मुझे वरदान दे

स्वप्न सु साकार होवें ज्ञान के वरदान से
अज्ञान का तम दूर होवें तेरे आशीष दान से
श्वास में माला सदा तब नाम का जपता रहूँ
मनु की सन्तान का सेवा सदा करता रहूँ
स्वार्थ मय परार्थ जीवन बीते ऐसा तान दे
हो शुद्ध जीवन! बुद्धि पावन! तु मुझे वरदान दे!

उत्साह की ऊँचाई को कृपा से तेरी पा सकूं
लक्ष्य जीवन का यहाँ कृपा से तेरी पा सकूं
शुद्ध निश्चल सरल पावन दृढ़व्रती मैं हो सकूं
भक्ति की मैं पुण्य सलिला का जल बन बह सकूं
दे न दे तु कुछ मुझे पर अपनापन का मान दे
हो शुद्ध जीवन! बुद्धि पावन! तु मुझे वरदान दे

नाम तेरा हंस वाहिनी ब्रह्मचारिणी
वागीश्वरी सरस्वती भारती तम हारिणी
कुमारी माँ जिनवाणी जिन उपदेश का सम्मान है
रात-दिन तुमको मेरा कोटिशः प्रणाम है
माँ बोधि दे! समाधि दे! वर दे केवल ज्ञान दे!
हो शुद्ध जीवन! बुद्धि पावन! तु मुझे वरदान दे!

श्री सिद्ध भक्ति

सिद्धा नुद्धूत कर्म प्रकृति-
समुदयान् साधितात्म स्वभावान्,
वन्दे सिद्धि प्रसिद्धयै तदनुपम-
गुण-प्रग्रहाकृष्टि-तुष्टः।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः,
प्रगुणगुण गणोच्छादि दोषापहाराद्,
योग्योपादान युक्त्या दृषद्,
इह यथा हेम भावोपलब्धिः।।1।।

सिद्ध स्वभावी उपमातीता, गुण गरिमा से युक्त हुए,
दर्शन ज्ञान अनंत प्रगट कर, अष्ट कर्म से मुक्त हुए।
आत्म सिद्धी मुक्ति प्राप्ति को, मैं नित वंदन करता हूँ,
बाह्याभ्यंतर कारण पाकर, निज आतम को भजता हूँ।।

जैसे स्वर्ण छिपा प्रस्तर पर, तप कुटकर ही निखरता है,
दर्शन ज्ञान सदा आच्छादित, कर्म नाश के उभरता है।
शुद्ध फटिक मणि सम निज आतम, अविनाशी अविकारी है,
आत्म तत्व की प्राप्ति हो तो, मुक्त अवस्था प्यारी है।।1।।

नाभावः सिद्धि - रिष्टा न,
निज-गुण हतिस्तत् तपोभिर्न युक्तेः,
अस्त्यात्मानादि-बद्धः,
स्वकृतज फल भुक्तत् क्षयान् मोक्षभागी।
ज्ञाता दृष्टा स्वदेह-प्रमिति-
रुपसमाहार-विस्तार-धर्मा
ध्रौव्योत्पत्ति-व्ययात्मा,
स्वगुण युतइतो नान्यथा साध्य सिद्धिः।।2।।

आतम का आभाव कहो ना, दर्शन ज्ञान न नष्ट कहो,
इसको माने तप न करते, कर्म बंध न मोक्ष अहो।
कर्म शुभाशुभ कर्ता भोक्ता, क्षय कर मुक्ति प्राप्त करे,
ज्ञाता दृष्टा देह प्रमाणि, जन्म नाश ध्रोव्यात्म रहे।
निज स्वभाव से युक्त आत्म है, इससे भिन्न जो मान रहे,
ना सिद्धि ना मुक्ति उनको, ऐसा जिन मत ज्ञान कहे।।2।।

स त्वन्तर्बाह्य-हेतु-प्रभव-
विमल-सद्दर्शन-ज्ञान-चर्या-
संपद्धेति-प्रघात-क्षत-
दुरित-तया व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः।
कैवल्यज्ञान-दृष्टि-प्रवर-
सुख-महावीर्य सम्यक्त्व-लब्धि-
ज्योति-र्वातायनादि-स्थिर-
परम-गुणै-रद्भूतै-र्भासमानः।।3।।

ऐसी श्रद्धा बाह्याभ्यंतर, रत्नत्रय से पूर्ण करें,
तप शस्त्रों के प्रबल वेग से, कर्म कालिमा चूर्ण करें।
क्षायिक दर्शन ज्ञान शक्ति सुख, सम्यक दान लाभ पावे,
भोग उपभोग नव लब्धि पाकर, प्रातिहार्य से सज जावे।।3।।

जानन् पश्यन् समस्तं,
सम-मनुपरतं संप्रतृप्यन् वितन्वन्,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं,
निचित-मनुपमं प्रीणय न्नीशभावम्।
कुर्वन् सर्व-प्रजाना-मपर-
मभिभवन् ज्योति-रात्मानमात्मा,
आत्मन्ये वात्मनासौ क्षण-
मुपजनयन्-सत्-स्वयंभूः प्रवृत्तः।।4।।

जाने देखे सर्व लोक को, बाधा ना क्षण को आवें,
आत्मिक सुख से तृप्त हुए वे, परम् ज्ञान को विकसावें।
मोह ध्वंस कर समवशरण में, सर्व जीव सन्तुष्ट करें,
अपर ज्योति को निज ज्योति से, पराभूत अरिहंत करे।।4।।

छिन्दन् शेषानशेषान्-निगल-
बल-कलीं-स्तैरनन्त-स्वभावैः,
सुक्ष्मत्वा ग्र्यावगाहा गुरु-
लघुक-गुणैःक्षायिकैः शोभमानः।
अन्यै-श्चान्य-व्यपोह-प्रवण
विषय-संप्राप्ति-लब्धि-प्रभावै
रूर्ध्व-व्रज्या स्वभावात्,
समयमुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्र्ये।।5।।

कर्म शैल को छिन्न भिन्न श्री, क्षीण योगी मुनिराज करें,
निज स्वभाव में स्थिर मुनिवर, कर्म शृंखला नाश करें।
अविनाशी रत्नत्रय गुण से, शोभित श्री जयवंत विभु,
अष्ट गुणों को पाकर क्षण में, सिद्ध हुए अरिहंत प्रभु।।5।।

अन्याकाराप्ति-हेतु-र्न च,
भवति परो येन तेनाल्प-हीनः।
प्रागात्मोपात्त-देह-प्रति-
कृति-रूचिराकार एव ह्यमूर्तः।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-
ज्वर-मरण-जरानिष्ट-योग-प्रमोह-
व्यापत्त्याद्युग्र-दुःख-प्रभव-
भव-हतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता।।6।।

अन्य रूप तन अंतिम किंचित, निराकार तन सुंदर हैं,
जो अमूर्त ज्वर जरा मरण अरु, क्षुधा तृषा से हटकर है।

जग वर्धक दुख सर्व नाश कर, अविनाशी सुख पाया है,
कौन कहे सिद्धों का सुख क्या, कोई नहीं कह पाया है।।6।।

आत्मोपादान-सिद्धं स्वय-
मतिशय-वद्-वीत-बाधं विशालम्।
वृद्धि-ह्रास-व्यपेतं,
विषय-विरहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम्।
अन्य-द्रव्यानपेक्षं,
निरुपममितं शाश्वतं सर्व-कालम्।
उत्कृष्टानन्त-सारं,
परमसुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम्।।7।।

आत्म शक्ति से स्वयं सिद्ध है, सहज स्वभाविक अतिशयवान,
वृद्धि ह्रास बाधा से विरहित, प्रतिद्वंदी ना भाव जहान।
पर पदार्थ अस्पर्श अनुपम, शाश्वत अमित अचल निष्काम,
जगती में ना ऐसा सुख जो, सिद्धों में होता अविराम।।7।।

नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्,
विविध-रस-युतै-रन्न-पानै-रशुच्या।
नास्पृष्टे-र्गन्ध-माल्यै-र्नहि,
मृदु-शयनै-ग्लानि-निद्राद्यभावात्।
आतंकार्ते रभावे,
तदुपशमन-सद्भेषजानर्थतावद्।
दीपा-नर्थक्य-वद् वा,
व्यपगत-तिमिरे दृश्यमाने समस्ते।।8।।

क्षुधा तृषा से रहित जिनेश्वर, षट् रस से न काम रहा,
अशुचिता से संस्पर्श रहे ना, गंध माल्य का नाम रहा।
निंदा ग्लानि रोग रहित प्रभु, न शय्या ना वैद्य लहे,
तिमिर रहित जब थान मिले तो, दीप शिखा को कौन चहे?।।18।।

तादृक्-सम्पत्-समेता,
विविध-नय-तपः-संयम-ज्ञान-दृष्टि-
चर्या-सिद्धाः समन्तात्
प्रवितत्-यशसो विश्व-देवाधि-देवाः।
भूता भव्या भवन्तः,
सकल-जगति ये स्तूयमाना विशिष्टै-
स्तान् सर्वान् नौम्यनन्तान्,
निजिग मिषुरं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम्।।9।।

गुण निधियों के स्वामी भगवन, रत्नत्रय से सिद्ध हुए,
तप नय संयम से यश जिनका, तीनलोक प्रसिद्ध हुए।
त्रयकालिक सिद्धों की स्तुति, तीर्थंकर भी करते हैं,
तब पद पाने त्री सन्ध्या में, भक्ति भाव से नमते हैं।।9।।

कृत्वा कायोत्सर्गं, चतुरष्टदोष विरहितं सु परिशुद्धं।
अतिभक्ति संप्रयुक्तो, यो वन्दते सो लघु लभते परम सुखम्।।

भक्ति युक्त निर्मल विशुद्ध हो, दोष बत्तीसों तज करके,
कायोत्सर्ग सहित वंदन कर, विनयशील प्रभु भज करके।
सिद्ध भक्ति वो निशदिन करता, सिद्धालय विश्वासी हो,
कर्म रहित शिव सौख्य विराजे, भव्य जीव अविनाशी हो।।10।।

इच्छामि भंते! सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-सम्पण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, सया णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वन्दामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण गुण-सम्पत्ति होदु मज्झं।

हे प्रभु! सिद्ध भक्ति करके जो, कायोत्सर्ग किया मैंने,
उन दोषों के आलोचन की, इच्छा है प्रभु पद सेने।
रत्नत्रय से युक्त आप हैं, अष्ट कर्म से रहित हुए,
ऊर्ध्व लोक मस्तक पर राजित, अष्ट गुणों से सहित हुए।।11।।

तप-नय-संयम चारित्र से जो, त्रैकालिक ध्रुव सिद्ध बने,
सदा काल पूजन अर्चन से, कर्म शृंखला शीघ्र हने।
दुक्खों का क्षय, कर्मों का क्षय, बोधि लाभ शुभ गति गमन,
मरण समाधि तव गुण प्राप्ति, सिद्ध प्रभु को सदा नमन।।12।।

श्री चैत्य भक्ति

जयति भगवान् हेमाम्भोज-प्रचार-विजृम्भिता-
वमर-मुकुटच्छायोद्गीर्ण-प्रभा-परिचुम्बितौ।
कलुष हृदया मानोद्भ्रांताः परस्पर-वैरिणः,
विगत-कलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विशश्वसुः।।1।।

स्वर्ण मयी कमलों पर चलते, गगन गमन शोभा अभिराम,
देव मुकुट कांति से शोभित, चरण कमल पूजित निष्काम।
मानी प्राणी कलुषित हृदया, बैरभाव या द्वंद रहें,
विगत कलुष हो प्रेमभाव हो, श्री जिनेन्द्र जयवंत रहें।।1।।

तदनु जयति श्रेयान्-धर्मः प्रवृद्ध-महोदयः,
कुगति-विपथ-क्लेशा-द्योसौ विपाशयति प्रजाः।
परिणत-नयस्यांगी-भावाद्-विविक्त-विकल्पितम्,
भवतु भवतस्रातृ त्रेधा जिनेन्द्र-वचोऽमृतम्।।2।।

जिनवर का जयघोष कुगति पथ, क्लेशों का भी अंत करें,
स्वर्ग मोक्ष दाता कल्याणी, जैन धर्म जयवंत रहें।
नय स्वीकृत कर अंग पूर्व की, ज्ञान बहे शुभधारा में,
अमृत सम जिनवर की वाणी, रक्ष करें संसारा से।।2।।

तदनु जयताज्जैनी वित्तिः प्रभंग-तरंगिणी,
प्रभव-विगम ध्रौव्य-द्रव्य-स्वभाव-विभाविनी।
निरुपम-सुखस्येदं द्वारं विघट्य निरर्गलम्,
विगत-रजसं मोक्षं देयान् निरत्यय-मव्ययम्।।3।।

केवल ज्ञानमयी जिनवाणी, भंग तरंगों से जानो,
जन्म नाश ध्रोव्यत्व गुणों से, इसको भव्यों पहचानों।
अनुपम सुख का द्वार खोलता, बंधन व्याधि रहित कहो,
अविनाशी रजरहित मोक्ष दे, शाश्वत सुख आनंद अहो।।3।।

अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायेभयस्तथा च साधुभ्यः।
सर्व जगद् वन्द्येभ्यो नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः।।4।।

तीन लोक में पूज्य है, अर्हंतसिद्ध महान।
सूरी पाठक मुनिवरा, सबको मेरा प्रणाम।।4।।

मोहादि-सर्व-दोषारि-घातकेभ्यः सदा हत-रजोभ्यः,
विरहित रहस् कृतेभ्यः पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्यः।।5।।

मोहदोष को नाश कर, नाशा घाति कर्म।
अरिहंतों को नमन हो, पूजा योग्य सुकर्म।।5।।

क्षांत्यार्जवादिगुण गणसुसाधनं सकललोक हितहेतुम्।
शुभ-धामनि धातारं वन्दे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम्।।6।।

क्षमा सरलता गुण सहित, तीन लोक हितकार।
स्वर्ग मोक्ष सुखधाम दें, धर्म नमूं सुखकार।।6।।

मिथ्याज्ञान-तमोवृत-लोकैक-ज्योति-रमित-गमयोगि।
सांगोपांग-मजेयं जैनं वचनं सदा वन्दे।।7।।

मिथ्यातम में दीप सम, दिव्य ज्ञान अजेय।
अंग बाह्य प्रविष्ट है, जिन वच नमुं सदैव।।7।।

भवन-विमानज्योति-र्व्यन्तर-नरलोक विश्वचैत्यानि।
त्रिजग दभिवन्दितानां त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम्।।8।।

चर्तुनिकाय के देव हो, ढाई द्वीप नरलोक।
जिन प्रतिमा स्थित जहाँ, सदा नमूं त्रियोग।।8।।

भुवनत्रयेऽपि भुवनत्रयाधिपाभ्यचर्य-तीर्थ-कर्तृणाम्।।
वन्दे भवाग्नि शान्त्यै विभवाना मालयालीस्ताः।।9।।

त्रिभुवनपति तीर्थेश के, मंदिर तीनों लोक।
भव ज्वाला की शांति को, सदा करूँ में ढोक।।9।।

इति पञ्च-महापुरुषाः प्रणुताजिनधर्म वचन-चैत्यानि।
चैत्यालयाश्च विमलां दिशन्तु बोधिं बुधजनेष्टाम्।।10।।

पँच परम परमेष्ठी है, चैत्य जिनागम धर्म।
चैत्यालय ज्ञानी नमें, निर्मल ज्ञानी कर्म।।10।।

अकृतानि कृतानि-चाप्रमेय-
द्युतिमन्ति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु।
मनुजामर-पूजितानि वन्दे,
प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम्।।11।।

दिव्य कांति से युक्त है, मंदिर तीनों लोक।
कृत्रिमाकृतिम बिम्ब को, सुर नर देते ढोक।।11।।

द्युति-मण्डल-भासुरांग-यष्टीः,
प्रतिमा अप्रतिमाजिनोत्तमानाम्।
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता,
वपुषा प्राञ्जलिरस्मि वन्दमानः।।12।।

कांतिमान तन काष्ठ युत, प्रतिमा उपमातीत।
त्रिभुवन वैभव देव को, कर जोड़ूँ तनदीप।।12।।

विगतायुध-विक्रिया-विभुषाः,
प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम्।
प्रतिमाः प्रतिमा-गृहेषु कान्त्याऽः-
प्रतिमाः कल्मष-शान्तयेऽभिन्दे।।13।।

भूषण अस्त्र विकार ना, प्रतिमा ग्रह जिनदेव।
वीतराग छबि कांतिमय, नमूं पाप शान्तेय।।13।।

कथयन्ति कषाय-मुक्ति-लक्ष्मीं,
परया शान्ततया भवान्तकानाम्।
प्रणमाम्यभिरूप-मूर्तिमन्ति
प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम्।।14।।

भव नाशक जिनरूप है, मुक्त चार कषाय।
युक्त चतुष्टय शांतिमय, नमुं मूर्ति शुचि पाय।।14।।

यदिदं मम सिद्धभक्ति-नीतं,
सुकृतंदुष्कृत-वर्त्म-रोधि तेन।
पटुना जिनधर्म एव भक्ति-र्भव-
ताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे।।15।।

पाप मार्ग रोके सदा, पाया पुण्य प्रसिद्ध।
सुकृत फल जन्मों रहे, जब तक बनूँ ना सिद्ध।।15।।

अर्हतां सर्वभावानां दर्शन-ज्ञान-सम्पदाम्।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि यथाबुद्धि विशुद्धये।।16।।

दर्शन ज्ञान से युक्त हैं, त्रयकालिक सर्वज्ञ।
अर्हतों के बिम्ब की, करू भक्ति अल्पज्ञ।।16।।

श्रीमद-भवन-वासस्था स्वयं भासुर-मूर्तयः।
वन्दिता नो विधेयासुः प्रतिमाः परमां गतिम्।।17।।

स्वाभाविक ज्योर्तिमयी, देवभवन में वास।
प्रतिमा सारी पूजता, पाने मोक्ष निवास।।17।।

यावन्ति सन्ति लोकेऽस्मिन्नकृतानि कृतानि च।
तानि सर्वाणि चैत्यानि वन्दे भूयांसि भूतये।।18।।

मध्य लोक में चेत्य जो, कृत्रिमाकृत्रिम होय।
श्री वैभव पाने सदा, नत जोडु कर दोय।।18।।

ये व्यन्तर-विमानेषु स्थेयांसः प्रतिमागृहाः।
ते च संख्या मतिक्रान्ताः सन्तु नो दोषविच्छिदे।।19।।

व्यन्तर देव विमान में, स्थिर प्रतिमा जान।
असंख्यात जिनदेव हो, नमूं दोष के हान।।19।।

ज्योतिषा-मथ लोकस्य भूतयेऽद्भुत-सम्पदः।
गृहाः स्वयम्भुवः सन्ति विमानेषु नमामि तान्।।20।।

ज्योतिष देव विमान में, अद्भुत अर्हत देव।
द्वय लक्ष्मी की प्राप्ति को, नमन करूँ सदेव।।20।।

वन्दे सुर-किरीटाग्र-मणिच्छाया भिषेचनम्।
याःक्रमेणैव सेवन्ते तदर्च्चाः सिद्धि लब्धये।।21।।

नमन किरीट सूराग्र से, मणि कांति अभिषेक।
चरणों की सेवा करे, वन्दूँ मुक्ति प्रवेश।।21।।

इति स्तुति पथातीत-श्रीभृता-मर्हतां मम।
चैत्यानामस्तु संकीर्तिः सर्वास्त्रव निरोधिनी।।22।।

स्तुति श्री जिनदेव की, कर्माश्रव अवरोध।
चेत्य प्रभु की संस्तुति, देवे मुक्ति बोध।।22।।

अर्हन-महा-नदस्य-त्रिभुवन-
भव्यजन-तीर्थ-यात्रिक-दुरित-
प्रक्षालनैक-कारणमति-लौकिक-
कुहक-तीर्थ-मुत्तम-तीर्थम्।।23।।

दिव्य महानद रूप हो, उत्तम तीरथ आप।
अघ प्रक्षालन हेतु-हर, लौकिक तीर्थ सन्ताप।।23।।

लोकालोक-सुतत्त्व-प्रयत्व-
बोधन-समर्थ-दिव्यज्ञान-
प्रत्यह-वहत्प्रवाहं व्रत-
शीलामल विशाल कूल द्वितयम्।।24।।

लोकालोक सुतत्व का, दिव्य ज्ञान प्रवाह।
निर्मल तट विशाल है, शीलव्रत दो राह।।24।।

शुक्लध्यान-स्तिमित स्थित-
राज-द्राजहंस-राजित मसकृत्।
स्वाध्याय-मन्द्रघोषं नाना-गुण-
समिति-गुप्ति-सिकता-सुभगम्।।25।।

शुक्ल ध्यान में स्थिर मुनिवर, राजहंस समसोह रहें।
गुप्ति समिति बालु सुंदर, स्वाध्याय धुनि मोह रहे।।25।।

क्षान्त्यावर्त-सहस्त्रं सर्व-दया-
विकच-कुसुम-विलसल्लतिकम्।
दुःसह-परीषहाख्य-द्रुततर-
रंग-त्तरंग-भंङ्गुर-निकरम्।।26।।

सहस लहर क्षमा की उठती, दया लता में फूलखिले।
कठिन परिषह तीव्र तरंग सम, क्षण भंगुर होकर निकले।।26।।

व्यपगत-कषाय-फेनं राग-
द्वेषादि-दोष-शैवल-रहितम्।
अत्यस्त-मोह-कर्दम-मतिदूर-
निरस्त-मरण-मकर-प्रकरम्।।27।।

कषाय फेन से रहित हो, काइ न राग द्वेष।
मोह कर्दम नष्ट कर, मरण मगर निशेष।।27।।

ऋषि-वृषभ-स्तुति-मन्द्रोद्रेकित-
निर्घोष-विविध-विहग-ध्वानम्।
विविध-तपोनिधि-पुलिनं सास्त्रव-
संवरण-निर्जरा-निःस्त्रवणम्।।28।।

गणधर गुण स्तुति करे, विविध विहग धुनि धीर।
जनसागर सेतु मुनि, अघ निर्जर पथ नीर।।28।।

गणधर-चक्र-धरेन्द्र-प्रभृति-
महा-भव्य-पुण्डरीकैः पुरुषैः।

बहुभिः स्नातं भक्त्या कलि-
कलुष मलापकर्षणार्ीं ममेयम्।।29।।

पाप मेल स्नान को, जिन सलिला है विशाल।
गणधर यति चक्रीन्द भी, भक्ति से नत भाल।।29।।

अवतीर्णवतः स्नातुं ममापि,
दुस्तर-समस्त-दुरितं दूरम्।
व्यपहरतु परम-पावन-मनन्य,
जय्य-स्वभाव-भाव-गम्भीरम्।।30।।

जिन सागर पावन महा, पर वादी जय धीर।
मैं भी नत स्नान कर, दूर करूँ भव पीर।।30।।

अताम्र-नयनोत्पलं सकल-कोप-वह्ने-र्जयात्,
कटाक्ष-शर मोक्ष-हीन मविकारतोद्रेकतः।
विषाद-मद-हानितः प्रहसितायमानं सदा,
मुखं कथयतीव ते हृदयशुद्धि मात्यन्तिकीम्।।31।।

कोप रहित सुंदर दो नयना, भाव विकारी जीत लिए,
पर कटाक्ष वाणों से रहिता, अहम खेद सब वीत गये।
मुस्काता मुखमण्डल पावन, शुद्ध हृदय को बता रहा,
अविनाशी मुक्ति के स्वामी, जिनवर है यह जता रहा।।31।।

निराभरण-भासुरं विगत-राग-वेगोदयात्,
निरम्बर-मनोहरं प्रकृति-रूप-निर्दोषतः।
निरायुध-सुनिर्भयं विगत-हिंस्य-हिंसा-क्रमात्,
निरामिष सुतृप्ति मद् विविधवेदनानां क्षयात्।।32।।

रागोदय का वेग नाशकर, भूषण वसन से रहित हुए,
यथा जात निर्दोष प्रकृतिमय, रूप दिगम्बर सहित हुए।
भय हिंसा से रहित आप हो, अस्त्र शस्त्र ना धारा है,
दोष अठारह क्षय कर जिनवर, पूर्ण तृप्त अनाहारा है।।32।।

मितस्थिति-नखांगजं गत-रजोमल-स्पर्शनम्,
नवाम्बुरुह चन्दन-प्रतिम दिव्य-गन्धोदयम्।
रवीन्दु-कुलिशादि-दिव्य-बहु लक्षणालङ्कृतम्,
दिवाकर-सहस्त्र-भासुर-मपीक्षणानां प्रियम्।।33।।

तन नख केश सदा स्थिर है, रजमल का स्पर्श नहीं,
नव्य कमल चंदन सी सुरभि, दर्शन हे प्रभु हर्ष मयी।
चंद्रसूर्य बज्रादिक शुभ प्रभु, सहस लक्षणों से शोभित,
फिर भी अनिमिष नयनों से लख, करता मम मन को मोहित।।33।।

हितार्थ-परिपन्थिभिः प्रबल-राग-मोहादिभिः,
कलंकितमना जनो यदभिवीक्ष्यशो शुद्ध्यते।
सदाभिमुख-मेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः,
शरद्विमल चन्द्र मण्डल मिवोत्थितं दृश्यते।।34।।

हितकारी है मोक्ष मार्ग पर, मोह राग है शत्रु प्रबल,
कलुषित हृदया मानव भी लख, हो जाते अतिशय निर्मल।
चतुर्मुखी जिन रूप आपका, फिर भी निज सम्मुख दिखता,
शरद चंद मंडल सम उज्ज्वल, अनुपम छवि पावन करता।।34।।

तदेत-दमरेश्वर-प्रचल-मौलि-माला-मणि,
स्फुरत्-किरण-चुम्बनीय-चरणारविन्द-द्वयम्।
पुनातु भगवज्जिनेन्द्र तव रूप-मन्धीकृतम्,
जगत् सकल मन्यतीर्थ गुरु रूप दोषोदयैः।।35।।

नम्रइंद्र मौली माला मणि, चरण चमक चुम्बित करता,
मिथ्या वादी देवतीर्थ गुरु, दोष उदय प्रतिक्षण हरता।
दिव्य रूप जिनवर का प्यारा, मन सन्ताप सदा हरते,
जीवन पावन सम्यक मय कर, मम भव भय नित क्षय करते।।35।।

क्षेपक श्लोकाः

मानस्तम्भाः सरांसि प्रविमलजल, सत्खातिका पुष्पवाटी।
प्राकारो नाट्यशाला द्वितयमुपवनं, वेदिकांत र्ध्वजाद्या।।
शालः कल्पद्रुमाणां सुपरिवृत्तवनं, स्तूपहर्म्यावली च।
प्राकारः स्फाटिकोन्तनृसुरमुनिसभा, पीठिकाग्र स्वयंभूः।।1।।

तीर्थंकर के समवशरण में, मानस्तम्भ सरोवर है,
निर्मल जल से भरी ख़ातिका, पुष्पवाटी नाटक घर है।
उपवन मुनि वेदी ध्वजाएं, कोट कल्प तरु वन परिसर,
बहु प्रासादों स्तुपो से, सात भूमि सोहे मनहर।।1।।
दीवारे स्फटिक मणि की, बारह सभाएँ लगी हुई,
मुनि आर्यिका देव देवियाँ, नर तिर्यंच से सजी हुई।
मध्य भाग त्रय कटनी ऊपर, सिंहासन सुंदर लगता,
स्वयं स्वयंभू अधर विराजे, भविक जनों का मन हरता।।1।।

वर्षेषु वर्षान्तर पर्वतेषु, नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु।
यावन्ति चैत्यायतनानिलोके, सर्वाणि वन्दे जिनपुंगवानाम्।।2।।

ऊर्ध्व अधो अरु मध्य लोक की, जिन पुंगव वंदन करता,
भरतैरावत मध्य गिरी के, सर्व क्षेत्र को नित भजता।
पंच मेरु नन्दीश्वर के जो, जिन चैत्यालय मनहर है,
नमो नमो त्रिकाल नमूं मैं, जो कल्याणी अघहर है।।2।।

अवनि तल गतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणाम्,
वनभवनगतानां दिव्य वैमानिकानाम्।
इह मनुज-कृतानां देव राजार्चितानाम्,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि।।3।।

पृथ्वी तल पर कृत्रिमा-कृत्रिम, व्यन्तर भवन में प्रतिमा है,
वैमानिक या नरकृत मंदिर, सब प्रतिमा की गरिमा है।
सौ इन्द्रो से पूजित जिनवर, निलय सदा सुखकारी है,
भाव सहित नित सुमरन करता, कल्याणी अघहारी है।।3।।

जम्बू धातकि पुष्करार्ध वसुधा क्षेत्रत्रये ये भवा।
श्चंद्राम्भोजशिखण्डि कण्ठनकनप्रावृंघनाभाजिना:।।
सम्यग्ज्ञान-चारित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धना:।
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नम:।।4।।

जम्बू धातकी पुष्करार्ध के, वसुधा में उत्पन्न हुए,
चन्द्र कमल या मोर कण्ठ की, आभा से सम्पन्न हुए।
स्वर्ण कांति या मेघ कांतिमय, सम्यक ज्ञान चरित्र धरें,
घाती विनाशी त्रय कालों में, जिनवर नमूँ पवित्र करें।।4।।

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचके कुण्डले मानुषांके।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले, यानि चैत्यालयानि।।5।।

श्री मंडप शोभा सम्पन्ना, मेरु कुलाचल या विजयार्ध,
शाल्मली जम्बू चैत्य वृक्षया, रति रूचक हो गिरी वक्षार।
कुंडल गिरी मानुषोत्तर पर्वत, अंजन गिरी या इष्वाकार,
दधि मुख शिखरे व्यन्तर ज्योतिष, स्वर्ग भवन वासी आधार।
सबमें सुंदर दिव्य भव्य जिन, मंदिर मन को भाता है,
मन वच तन से भाव सहित हो, ''सौरभ'' शीश झुकाता है।।5।।

देवा सुरेन्द्र नरनागसमर्चितेभ्य:,
पापप्रणाशकर भव्य मनोहरेभ्य:।
घंटाध्वजादि परिवार विभूषितेभ्य,
नित्यं नमो जगति सर्वजिनालयेभ्य:।।6।।

(वसन्त तिलिका छंद)

देवा सुरेंद्र नर नाग सदार्चिता है,
पाप प्रणाशकर भव्य मनोहरा है।
घण्टा ध्वजादि शुभमंगल द्रव्य सोहे,
नित्यं नमो जिन निकेतन आत्म मोहें।।6।।

इच्छामि भंते! चेइय भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि, किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसुविलोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं अंचंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति अहमवि इह संतो तत्थ संताइं सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्ओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउमज्झं।

हे प्रभु चैत्यभक्ति करके जो, कायोत्सर्ग किया मैंने।
उन दोषों की आलोचन कर, इच्छा है तब पद सेने।।

ऊर्ध्वअधो अरूँ मध्य लोक के, कृत्रिमा कृत्रिम चैत्यालय।
तीन लोक में रहने वाले, व्यन्तर ज्योतिष भवनालय।।

कल्प वासी चउदेव कुटुम्बी, प्रभु अर्चा को आते हैं।
नाच नाच कर चित उमगाते, श्रद्धा भाव बढ़ाते हैं।।

दिव्य नीर गन्धाक्षत पुष्पं, नेवज थाल सजाते हैं।
दीप धूप फल अष्ट द्रव्य ले, दिव्य पूज रचाते हैं।।

मैं भी उन सब चैत्यालय की, पूजन अर्चन नमन करूँ।
वंदन का फल दुख अघ क्षय हो, रत्नत्रय का वरण करूँ।।

मरण समाधि उत्तम गति हो, भावभावना भाता हूँ।
जिनवर के गुण सम्पत्ति पाने, चैत्यभक्ति को गाता हूँ।।

श्री श्रुतभक्ति

स्तोष्ये संज्ञानानि परोक्ष-प्रत्यक्ष-भेद-भिन्नानि।
लोकालोक विलोकन लोलित सल्लोक लोचनानि सदा।।1।।

लोका-लोक विलोकन इच्छुक, महापुरुषों के नेत्र समान।
है परोक्ष प्रत्यक्षभेद युत, सम्यक ज्ञान करूँ गुणगान।।1।।

अभिमुख नियमित बोधन माभिनिबोधिक मनिन्द्रियेन्द्रियजम्।
बह्वाद्यवग्रहादिक कृत षट्त्रिंशत् त्रिशत भेदम्।।2।।

विविधर्द्धि बुद्धि कोष्ठ स्फुट बीज पदानुसारि बुद्धयधिकम्।
संभिन्न-श्रोतृ-तया, सार्ध श्रुतभाजनं वन्दे।।3।।

योग्य क्षेत्र में स्थित नियमित, मन इन्द्रिय प्रगटित जाने।
द्वादश चउ बहु अवग्रहादि, तीन सो तिरेशठ पहचाने।।2।।

विविध ऋद्धि बुद्धि कोष्ठादि, संभिन्न श्रोतृ से पूर्ण है।
मति पूर्वक श्रुत ज्ञान प्रगटता, अत: नमन भव चूर्ण है।।3।।

श्रुतमपि जिनवरविहितं गणधररचितं द्वयनेक भेदस्थम।
अंगांगबाह्य-भावित-मनन्त-विषयं नमस्यामि।।4।।

अर्थ रूप जिनदेव निरूपित, गणधर द्वारा रचना है।
अंग बाह्य प्रविष्ट रूप दो, श्रुतानेक को नमना है।।4।।

पर्यायाक्षर-पद-संघात-प्रतिपत्ति कानुयोग-विधीन्।
प्राभृतक-प्राभृतकं प्राभृतकं वस्तु-पूर्वं च।।5।।

तेषां समासतोऽपि च विंशति-भेदान् समश्नुवानं तत्।
वन्दे द्वादशधोक्तं गम्भीर-वर-शास्त्र-पद्धत्या।।6।।

पर्यायाक्षर पद संघात, प्रतिपत्तिक अनुयोग विधि।
प्राभृत प्राभृत प्राभृतकं ही, वस्तु पूर्व समास निधी।।5।।

बीस भेद से व्याप्त शास्त्र, गम्भीर श्रेष्ठ व विकसित है।
द्वादशांग मय श्रुत ज्ञान को, वंदन मेरा नियमित है।।6।।

आचारं सूत्रकृतं स्थानं समवाय-नामधेयं च।
व्याख्या-प्रज्ञप्तिं च ज्ञातृकथोपासकाध्ययने।।7।।

वन्देऽन्तकृद्दश-मनुत्तरोप पादिकदशं दशावस्थम्।
प्रश्नव्याकरणं हि विपाकसूत्रं च विनमामि।।8।।

आचार सूत्र स्थान अंग है, समवायांग भी नाम कहो।
व्याख्या प्रज्ञप्ति ज्ञातृ कथासह, उपासकाध्यनांग नमो।।7।।

नमस्कार अंतः कृदश, अनुत्तरोपादि दशांग नमो।
प्रश्न व्याकरण विपाक सूत्र है, दृष्टि वाद को नमो नमो।।8।।

परिकर्म च सूत्रं च स्तौमि प्रथमानुयोग-पूर्वगते।
सार्द्धं चूलिकयापि च पंचविधं दृष्टिवादं च।।9।।

दोहा— सूत्र पूर्वगत चूलिका, परिकर्म है नाम।
प्रथमानुयोग ये पाँच है दृष्टि वाद प्रणाम।।9।।

पूर्वगतं तु चतुर्दश धोदित-मुत्पादपूर्व-माद्यमहम्।
आग्रायणीय-मीडे पुरु-वीर्यानुप्रवादं च।।10।।

संततमहमभिवन्दे तथास्ति-नास्ति प्रवादपूर्वं च।
ज्ञान प्रवाद-सत्य प्रवाद-मात्म प्रवादं च।।11।।

कर्मप्रवाद-मीडेऽथ प्रत्याख्यान-नामधेयं च।
दशमं विद्याधारं पृथुविद्यानुप्रवादं च।।12।।

कल्याण-नामधेयं प्राणावायं क्रियाविशालं च।
अथ लोकबिंदुसारं वन्दे लोकाग्रसारपदम्।।13।।

पूर्वगत के चौदह भेद, क्रम से इनको नमता हूँ।
उत्पादपूर्व अग्रायणी पूर्व औ, वीर्यानुवाद को भजता हूँ।।10।।

अस्ति नास्ति ज्ञानसत्य अरूँ, आत्म प्रवाद कहे मुनिराज।
कर्मप्रवादम् प्रत्यख्यानम्...दशवा विद्यानुवाद में राज।।11।।

कल्याणवाद ओप्राणावाद शुभ, क्रियाविशाल महान है।
मुक्ति पद का सार कहाता, लोक विंदु प्रणाम है।।13।।

दश च चतुर्दश चाष्टावष्टादश च द्वयो-र्दिषट्कं च।
षोडश च विंशतिं च त्रिंशतमपि पञ्चदश च तथा।।14।।

वस्तूनि दश दशान्येष्वनुपूर्वं भाषितानि पूर्वाणाम्।
प्रतिवस्तु प्राभृतकानि विंशतिं विशंति नौमि।।15।।

प्रत्येक वस्तु में बीस बीस ही, प्राभृतक का कथन किया।
चौदह पूर्वो में क्रमशः ये, दश चौदह अठ चयन किया।।14।।

अठदश बारह बारह सोलह, बीस तीस पंद्रह जानो।
दश दश दश दश वस्तु कही है, समझो नमलो पहचानो।।15।।

पूर्वान्तं ह्यपरान्तं ध्रुव-मध्रुव-च्यवनलब्धि-नामानि।
अध्रुव-सम्प्रणिधिं चाप्यर्थं भौमावयाद्यं च।।16।।

सर्वार्थ-कल्पनीयं ज्ञानमतीतं त्वनागतं कालम्।
सिद्धिमुपाध्यं च तथा चतुर्दशवस्तूनि द्वितीयस्य।।17।।

द्वितीय पूर्व अग्रायणीय की, चौदह वस्तु क्रम जानों।
पूर्वान्तं अपरांतं ध्रुवं, अध्रुव च्यवन लब्धि मानों।।16।।

अध्रुव सम्प्रणिधि अर्थ अरूँ, भोम व्रतादि सर्वार्थ।
ज्ञान अतीत अनागत काल, सिद्धि उपाध्य नमूँ हितार्थ।।17।।

पञ्चमवस्तु-चतुर्थं-प्राभृत कस्यानुयोग-नामानि।
कृतिवेदने तथैव स्पर्शन-कर्मप्रकृतिमेव।।18।।

बन्धन-निबन्धन-पक्र मानुपक्र म-मथाभ्युदय-मोक्षौ।
सङ्क्रमलेश्ये च तथा लेश्यायाः कर्म-परिणामौ।।19।।

सात-मसातं दीर्घ ह्रस्वं भवधारणीय-संज्ञं च।
पुरुपुद्गलात्मनाम च निधत्त-मनिधत्त-मभिनौमि।।20।।

सनिकाचितमनिकाचितमथकर्मस्थितिकपश्चिमस्कं धौ।
अल्पबहुत्वं च यजे तद्द्वाराणां चतुर्विंशम्।।21।।

द्वितीय पूर्व की पंचम वस्तु, च्यवन लब्धि कहलाती है।
चौबीसी अनुयोग द्वार है, सम्यक ज्ञान बढ़ाती हैं।।18।।

कृति वेदना कर्म स्पर्शन, प्रकृति बन्ध निबंधन हैं।
प्रक्रम अनुपक्रम अभ्युदय सह, मोक्ष लेश्या संक्रम है।।19।।

लेश्या कर्म परिणाम गिन, सातासात दीर्घ ह्रस्व।
भवधारणीय पुद्गलात्म कह, निधतानिधत्त नामस्व।।20।।

निकाचित अनिकाचित कर्म स्थित, पश्चिम स्कंध अल्प बहुत्व।
चतुर्थ क्रम प्रकृति प्राभृत का, प्रवेश द्वार नमो सर्वस्व।।21।।

कोटीनां द्वादशशत-मष्टापञ्चाशतं सहस्राणाम्।
लक्षत्र्यशीति-मेव च पञ्ज च वन्दे श्रुतपदानि।।22।।

एक सो बारह कोटी तिरासी, लख अट्ठावन पंच हजार।
द्वादशांग की पद संख्या को, नमन करूँ मैं बारम्बार।।22।।

षोडशशतं चतुस्त्रिंशत् कोटीनां त्र्यशीति-लक्षाणि।
शतसंख्याष्टा सप्तति-मष्टाशीतिं च पद-वर्णान्।।23।।

सोलह सो चौंतीस कोटि में, लाख तिरासी सात हजार।
आठ सौ अट्ठासी पद के अक्षर, नित्य नमो ज्ञान विस्तार।।23।।

सामायिकं चतुर्विंशति-स्तवं वन्दना प्रतिक्रमणम्।
वैनयिकं कृतिकर्म च पृथु-दशवैकालिकं च तथा।।24।।

वर-मुत्तराध्ययन-मपि कल्पव्यवहार-मेव-मभिवन्दे।
कल्पाकल्पं स्तौमि महाकल्पं पुण्डरीं च।।25।।

परिपाट्या प्रणिपतियोऽस्म्यहं महापुण्डरीकनामैव।
निपुणान्यशीतिकं च प्रकीर्णकान्यंग-बाह्यानि।।26।।

सामयिक चौबीसी स्तुति, वंदना करे या प्रतिक्रमण।
वैनेयिक और कृति कर्म का, विशाल दश वैकालिकम्।।24।।

परम् ग्रन्थ उत्तराध्ययन या, कल्प व्यवहार ग्रन्थ कहा।
सम्यक श्रुत सुज्ञान कथा को, सदा नमुँ नित शब्द महा।।25।।

कल्पाकल्प महाकल्पं अरु, पुण्डरीक का स्तवन है।
महापुण्डरीक निषिधिका का, अति सूक्ष्म विवेचन है।।
अंग बाह्य श्रुत कथा प्रकीर्णक, महाशास्त्र कहलाते हैं।
तीर्थंकर गणधर की वाणी, नम्री भूत सुख पाते हैं।।26।।

पुद्गल-मर्यादोक्तं प्रत्यक्षं सप्रभेद-मवधिं च।
देशावधि-परमावधि-सर्वावधि-भेद-मभिवन्दे।।27।।

विषय भूत पुद्गल मर्यादा, इन्द्रिय बिन जो जान रहें।
देश परम् और सर्वावधि के, भेद सहित हम मान रहें।।
द्रव्य देश अरु काल भाव की, सीमा से पुद्गल जाने।
नमन करूँ मैं अवधि ज्ञान को, परम् शुद्धता को पानें।।27।।

परमनसि स्थितमर्थं मनसा परिविद्य मन्त्रिमहितगुणम्।
ऋजुविपुलमतिविकल्पं स्तौमि मनः पर्ययज्ञानम्।।28।।

पर मन स्थित रूपी अर्थ को, निज मन से मुनिवर जाने।
ऋजुमति व विपुल मति दो, भेद रूप है पहचाने।।
परम् संयमी शुद्धमना मुनि, मनः पर्यय को प्राप्त करे।
इनकी स्तुति वंदना करके, निज स्वरूप मय आप्त वरें।।28।।

क्षायिक-मनन्त-मेंकं त्रिकाल-सर्वार्थ-युगपदवभासम्।
सकल-सुख-धाम सततं वन्देऽहं केवलज्ञानम्।।29।।

ज्ञानवरण करम के छटते, क्षायिक ज्ञान प्रगट होता।
अविनाशी यह एक ज्ञान है, केवल आत्म निकट होता।।
त्रैकालिक वस्तु को युगपत, केवल ज्ञानी जान रहे।
सकल सुखों का धाम यही है, केवल ज्ञान प्रणाम करें।।29।।

एवमभिष्टुवतो मे ज्ञानानि समस्त-लोक-चक्षूंषि।
लघु भवताज्ज्ञानर्द्धि-र्ज्ञानफलं सौख्य-मच्यवनम्।।30।।

तीन लोक के चक्षु रूप जो, मति श्रुत अवधि ज्ञान कहा।
मन: पर्यय केवल्य ज्ञान की, स्तुति करता सुखद यहाँ।।
द्वादशांग श्रुत ज्ञान वंदना, निर्मल मन से करूँ सदा।
उसका फल केवल्य ज्ञान हो, अविनाशी सुख मिले मुदा।।30।।

इच्छामि भंते! सुदभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अंगोवंगपइण्णए पाहुडय परियम्म सुत्त पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइधम्मकहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोलिलाहो सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपतित होदु मज्झं।

हे प्रभु श्रुत भक्ति करके जो, कायोत्सर्ग किया मैंने।
उन दोषों की आलोचन कर, इच्छा है तब पद सेने।
अंग उपाङ्ग प्रकीर्णक प्राभृत, परिकर्म सूत्र अनुयोग।
पूर्वगत चुलिका सूत्र अरुँ, स्तव स्तुति कथा प्रयोग।।31।।

नित्यकाल अर्चनपूजन अरुँ, वंदन नमन किया करता।
उस का फल दुक्खो का क्षय हो, अघ क्षय रत्नत्रय वरता।।
बोधि समाधि प्राप्त करूँ मैं, सुगति में हो सदा गमन।
जिनवर गुण सम्पत्ति पाऊँ, द्वादशांग को करूँ नमन।।32।।

श्री चारित्र भक्ति

येनेन्द्रान भुवन-त्रयस्य विलसत्-केयूर-हारांगदान्,
भास्वन्-मौलि-मणिप्रभा-प्रविसरोत्-तुंगोत्तमांगान्नतान्।
स्वेषां पाद-पयोरुहेषु मुनय-श्चक्रुः प्रकामं सदा,
वन्दे पञ्चतयं तमद्य निगदन्-नाचार-मभ्यर्चितम्।।1।।

देदीप्यमान मणि मुकुट हार से, तन जिनका शोभित होता,
तीन लोक के इंद्र देव का, मस्तक नित गर्वित होता।
ऐसे इंद्र को मुनिराज ने, अपने चरण झुकाया है,
वंदन पंचाचार कथन कर, मन मेरा हर्षाया है।।1।।

अर्थ—व्यंञ्जन-तद्द्वया-विकलता-कालोपधा-प्रश्रयाः
स्वाचार्याद्यनपह्नवो बहु-मति-श्चेत्यष्ट धा व्याहृतम्।
श्रीमज्ज्ञाति-कुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचार-महं त्रिधा प्रणिपताभ्युद्धूतये कर्मणाम्।।2।।

व्यंजन अर्थ उभय अविकलता, काल विनय उपधान कहो,
गुरु नाम ना गौण करे वह, अनिहन्नव उपधान अहो।
श्रीमद ज्ञातृ वंश के इन्दु, धर्म तीर्थ नायक श्री वीर,
अठविध ज्ञानाचार प्रवक्ता, त्रय योगों से नमूं महावीर।।2।।

शंकादृष्टि-विमोह काङ्क्षणविधि-व्यावृत्ति सन्नद्धताम्,
वात्सल्यं विचिकित्सना-दुपरतिं धर्मोपबृंह-क्रियाम्।
शक्त्या शासन-दीपनं हित-पथाद् भ्रष्टस्य संस्थापनम्,
वन्दे दर्शन-गोचर सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात्।।3।।

शंका कांक्षा ग्लानि मूढ़ता, जिनधर्मी अति दूर रहें,
जिन प्रभावना उपगूहन धर, वात्सल्य भरपूर रहे।
संयम पथ से गिरे जीव को, उसी मार्ग स्थित करता,
सम्यक दर्शनाचार शिरोनत आदर भाव सदा धरता।।3।।

एकान्ते शयनोपवेशन-कृतिः संतापनं तानवम्,
संख्या-वृत्ति-निबन्धना-मनशनं विष्वाण-मद्धोदरम्।
त्यागं चेन्द्रिय-दन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्यानिशम.,
षोढ़ा बाह्यमहं स्तुवे शिव गति-प्राप्त्यभ्युपायं तपः।।4।।

सिद्धालय प्राप्ति का साधन, एकान्तों में वास करे,
तन सन्तापन व्रत परिसंख्यान, ऊनोदर उपवास धरे।
इंद्रिय गजमद वर्धन करने, वाले रस का त्याग करे,
छः बहिरंग तपस्या करते, स्तुति कर अनुराग करे।।4।।

स्वाध्यायः शुभकर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थापनम.,
ध्यानं व्यापृतिरा मयाविने गुरौ, वृद्धे च बाले यतौ।
कायोत्सर्जन सत्क्रिया विनय-इत्येवं तपः षड्विधं,
वंदेऽभ्यन्तरमन्तरंग बलवद्विद्वेषि विध्वंसनम्।।5।।

शुभ कर्मों से च्युत ना होने, स्वाध्याय तप करते है,
विनय ध्यान कायोत्सर्ग कर, आत्म भाव में रमते हैं।
रोगी बाल वृद्ध मुनियों की, सेवा छः कृत शुभ करते,
काम क्रोध मद नाशन हारी, अंतरंग तप नित नमते।।5।।

सम्यग्ज्ञान विलोचनस्य दधतः, श्रद्धानमर्हन्मते,
वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि, स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः।
या वृत्तिस्तरणीव नौरविवरा, लध्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचारमहं तमूर्जितगुणं, वन्दे सतामर्चितम्।।6।।

सम्यक ज्ञान नयन के धारी, जिनशासन श्रद्धान करें,
नहीं छिपावें निज शक्ति को, तप वृद्धि कल्याण करें।
छिद्र रहित छोटी नौका सम, भव समुद्र के तारणहार,
सज्जन पूजित महागुणी है, वीर्याचार नमुँ शत वार।।6।।

तिस्रः सत्तमगुप्तय स्तनुमनो, भाषा निमित्तोदयाः,
पञ्चेर्यादि-समाश्रयाः समितयः पञ्चव्रतानीत्यपि।
चारित्रोपहितं त्रयोदशतयं, पूर्वं न दृष्टं परै-
राचारं परमेष्ठिनो जिनपते, वीरं नमामो वयम्।।7।।

मन वच तन के कारण से जो, तीन गुप्तियाँ प्रगटित है,
ईर्या भाषाश्रय से होती, पंच समितियाँ भाषित है।
पाँच महाव्रत मिलकर तेरह, वीरप्रभु चारित्र कहे,
नमन करें चारित्राचार को, वीर पूर्व नान्यत्र कहे।।7।।

आचारं सह-पञ्चभेदमुदितं, तीर्थं परंमंगलम्,
निर्ग्रन्थानपि सच्चरित्रमहतो, वंदे समग्रान्यतीन्।
आत्माधीन सुखोदया मनुपमां, लक्ष्मीमविध्वंसिनीम्,
इच्छन्केवल दर्शनावगमन, प्राज्य प्रकाशोज्वलाम्।।8।।

पंचाचार ही जैनधर्म में, परम तीर्थ और मंगल है,
निर्ग्रन्थ मुनि जो महाचरित धर, चरण वंदना हर पल है।
आत्माश्रित सुख अनुपम उज्जवल, दर्शन ज्ञान से सज्जित है,
अविनाशी मुक्ति की चाहत, पंचाचारी पूजित है।।8।।

अज्ञानाद्यदवीवृतं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चान्यथा,
तस्मिन्नर्जितमस्यति प्रतिनवं, चैनो निराकुर्वति।
वृत्ते सप्ततयीं निधिं सुतपसामृद्धिं नयत्यद्भुतं,
तन्मिथ्या गुरुदुष्कृतं भवतु मे, स्वंनिंदितो निंदितम्।।9।।

आगम के अनुकूल आचरण, ना कीना करवाया हो,
प्रतिक्षण संचित पाप विनाशक, संयम तप विसराया हो।
विस्मयकारी रिद्धि दाता, तप वृत्ति में दोष लगे,
स्व निंदा निंदित मम दुष्कृत, मिथ्या हो मन तोष जगे।।9।।

संसार-व्यसनाहतिप्रचलिता, नित्योदय प्रार्थिनः,
प्रत्यासन्न विमुक्तयः सुमतयः, शान्तैनसः प्राणिनः।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं, सोपानमुच्चैस्तराम,
आरोहन्तु चरित्रमुत्तमदिं, जैनेन्द्रमोजस्विनः।।10।।

संसार दुखों से भयाक्रांत हो, शाश्वत सुख का करो जतन,
रत्नत्रय मुक्ति का कारण, भव्य निकट नित करे गमन।
सम्यक बुद्धि धार शांत अघ, ओजस्वी सोपान चढ़े,
जिन मारग उत्तम चरित्र धर, आरोहण निष्काम बढ़े।।10।।

इच्छामि भंते! चारित्त भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्स आलोचउं सम्मणाण जोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्वपहाणस्स, णिव्वाण मग्गस्स, कम्मणिज्जर फलस्स, खमाहारस्स, पञ्चमहव्वय संपण्णस्स, तिगुत्तिगुत्तस्स, पञ्चसमिदि जुत्तस्स, णाणज्झाण साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्मचारित्तस्स णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

हे प्रभु! चारित्र भक्ति करके, कायोत्सर्ग किया मैंने।
उन दोषों की आलोचना कर, इच्छा है प्रभु पद सेने।।

सम्यक ज्ञान प्रकाश हुआ है, सम्यक दर्शन से पावन।
मोक्ष मार्ग का मूल तत्व यह, सर्व गुणा ग्रणी साधन।।

कर्म निर्जरा फल इसका है, क्षमा धर्म आधार रहा।
पंचमहाव्रत गुप्ति त्रयों से, रक्षित शोभित सार कहा।।

पंच समितियाँ युक्त धर्म है, ज्ञान ध्यान का साधन है।
समता का प्रवेश द्वार यह, सु चारित्र आराधन है।।

त्रय कालिक पूजन अर्चन नत, वंदन दुःख अघ क्षय होवे।
बोधि लाभ सुगति गमन हो, सम्पत्ति जिन गुण मय होवे।।

श्री योगि भक्ति

जाति जरोरुरोग मरणातुर, शोक सहस्त्रदीपिताः,
दुःसह नरक पतन सन्त्रस्तधियः प्रतिबुद्ध चेतसः।
जीवितमंबु बिंदुचपलं, तडिदभ्रसमा विभूतयाः,
सकलमिदंविचिन्त्यमुनयः, प्रशमायवनान्तमाश्रिताः।।1।।

जन्म जरा मृत रोग शोक दुख, सहस कष्ट पीड़ित प्राणी।
महाभयंकर नरक वेदना, सोच-सोच बोधित ज्ञानी।।
बादल बिजली ओस बिंदूसम, जग वैभव क्षण भंगुर जान।
आत्म अलौकिक शांति पाने, वन आश्रय ले मुनि महान।।1।।

व्रतसमिति गुप्ति संयुताः, शमसुख माधाय मनसि वीतमोहाः।
ध्यानाध्ययन वंशगताः, विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति।।2।।

पंच महाव्रत समिति गुप्ति त्रय, ज्ञान-ध्यान तप लीन रहे।
वीत मोही मुनि मन वश में कर, कर्म श्रृंखला क्षीण करें।।
मोक्ष सुखों की तीव्र लालसा, भव भटकन को मिटा रहें।
मुनि मुद्रा ले मौन साधना, मुखरित हो मन जुटा रहे।।2।।

दिनकर किरण निकर संतप्त, शिला निचयेषु निष्पृहाः,
मलपटला वलिप्त तनवः शिथिली कृतकर्म बंधनाः।
व्यपगत मदन दर्प रतिदोष, कषाय विरक्त मत्सराः,
गिरिशिखरेषु चंडकिरणाभि, मुखस्थितयो दिगम्बराः।।3।।

दिनकर की संतप्त ताप से, गिरी शिला तप जाते हैं।
सूर्य मुखी हो आतापन धर, मुनिवर ध्यान लगाते हैं।।
मात्सर्य रति काम कषाय, मुक्त दिगम्बर यतिवर हैं।
तन मल लिप्त करम बन्ध निर्बल, निस्पृहयोगी ऋषिवर हैं।।3।।

सज्ज्ञानामृत पायिभिः, क्षान्तिपयः सिञ्च्यमान पुण्यकायैः।
धृतसंतोषच्छत्रकैः, तापस्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः।।4।।

वसंतिलिका छंद

ज्ञानामृता नित मुनि जन पान करते।
नीर क्षमा सुतन सिंचन पुण्य वरते।
संतोष छत्र मन में मुनि धारते हैं।
संताप घोर सहकर निज तारते हैं।।4।।

शिखिगल कज्जलालि मलिनै, र्विबुधाधिपचाप चित्रितैः,
भीमरवै र्विसृष्टचण्डा शनि, शीतल वायु वृष्टिभिः।
गगनतलं विलोक्य जलदैः, स्थगितं सहसा तपोधनाः,
पुनरपि तरुतलेषु विषमासु, निशासु विशंकमासते।।5।।

मोर कंठ भँवरें सम काले, मेघ भयंकर शोर करे।
बिजली गिरावें शीत हवा दें, वर्षा भी घनघोर करें।।
इंद्र धनुष आकाश तले लख, तपोधनी न भय खाते।
विषम निशा में तरुतल आसन, निर्भय मुनि निज को ध्याते।।5।।

जलधारा शरताडिता, न चलन्ति चरित्रत-सदा नृसिंहाः।
संसार दुःख भीरवः, परीषहा राति घातिनः प्रवीराः।।6।।

दोहा— वाणों सम जल धार चुभें, जग दुख से भय-भीत।
परिषह शत्रु घात कर, धैर्य मुनि न चलित।।6।।

अविरत बहल तुहिनकण, वारिभि रंध्रिपपत्र पातनै-
रनवरतमुक्तसात्कारवैः, पुरुषैरथानिलैः शोषितगात्रयष्टयः।
इह श्रमणा धृति कंबला वृताः शिशिर निशां,
तुषार विषमां गमयन्ति, चतुःपथे स्थिताः।।7।।

बर्फीली तूफानी वायु, वृष्टि होती चारो ओर।
वृक्षों के पत्ते नित गिरते, सांय सांय वायु का शोर।।
दुर्बल सूखी काया को भी, धीरज कम्बल से ढाके।
शीत काल की विषम रात में, चौराहे मुनिवर जागें।।7।।

इति योगत्रयधारिणः सकलतपशालिनः प्रवृद्ध पुण्यकायाः।
परमानन्दसुखैषिणः समाधिमग्रयं दिशंतु नो भदन्ताः।।8।।

ऐसे योगत्रय धारी मुनि, आतापन तप तपते हैं।
अभ्रावकाश तरु तल धारण कर, तप शोभा से सजते हैं।।
पुण्य बढ़ाकर निराबाध सुख, इच्छुक संत महान बने।
भक्ति करता उन मुनियों की, शुक्ल ध्यान प्रदान करें।।8।।

क्षेपकश्लोकानिः

योगीश्वरान् जिनान्सर्वान् योगनिर्धूत कल्मषान्।
योगैस्त्रिभिरहं वंदे, योगस्कंध प्रतिष्ठितान्।।1।।

योगीश्वर या श्री जिनवर हो, त्रय योगों से करूँ नमन।
धर्म ध्यान ओर शुक्ल ध्यान धर, कर्म घातिया किया शमन।।1।।

प्रावृट्काले सविद्युत्प्रपतित सलिले वृक्षमूलाधिवासाः।
हेमंते रात्रिमध्ये, प्रतिविगतभयाकाष्ठवत् त्यक्तदेहाः।।2।।

ग्रीष्मे सूर्यांसुतप्ता, गिरिशिखरगताः स्थानकूटान्तरस्थाः।
ते मे धर्म प्रदद्युर्मुनिगणवृषभा मोक्षनिः श्रेणिभूताः।।3।।

वर्षा में विद्युत की चमचम, जल बरसे बादल गरजे,
वृक्ष मुल अधिवास धारते, रात्रि ठण्डक बहु सहते।
भय से मुक्त काष्टवत् छोड़ें, काय मोह से रहित हुए,
ग्रीष्म ऋतु में सुर्याभिमुख, पर्वत पर तप सहित हुए।।2-3।।

गिम्हे गिरिसिहरत्था, वरिसायाले रुक्खमूलरयणीसु।
सिसिरे वारिसयणा, ते साहु वंदिमो णिच्चं।।4।।

ग्रीष्म काल में गिरि शिखर के, ऊपर आतापन धारें,
वर्षा ऋतु में वृक्ष तले तप, ध्यान करे निज शृंगारें।
मैदानों में रात्रि गुजारे, सांय सांय जब पवन चले।
मुनि जनों की श्रेष्ठ साधना, नमन करें भव भ्रमण टले।।4।।

गिरि कंदर दुर्गेषु, ये वसंति दिगंबराः।
पाणिपात्र पुटाहारास्ते यांति परमां गतिम्।।5।।

गिरी कन्दर बिल गुफा माँद या, जंगल शून्यागार रहे
पाणि पात्र आहार करे वें, निज आतम उद्धार करें
मोह बेर मुर्च्छा आकांक्षा, छोड़ योगी निज ध्यान करें
मरण समाधि धार हितंकर, देव गति निर्वाण वरे।।5।।

इच्छामि भंते! योगि-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अड्ढाइज्जदी वदोसमुद्देसु, पण्णारस कम्मभूमिसु, आदावण रुक्खमूल अब्भोवास ठाणमोण-विरासणेक्क पास कुक्कुडासण चउछपक्खखवणादि जोगजुत्ताणं, सव्वसाहुणं, णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

हे प्रभु! योगी भक्ति करके, कायोत्सर्ग किया मैंने।
उन दोषों की आलोचन कर, इच्छा है तव पद सेनें।।

ढाई द्वीप और दो समुद्र में, पंद्रह कर्म भूमि सारी।
आतापन अभ्रावकाश या, वृक्षमूल मुनि तप धारी।।

कुक्कुट वीरासन अनशन अरु, करवट एक शयन करते।
योगी मौनी यतिराज की, अर्चन-पूजन नित करते।।

इनके वंदन-आराधन से, कर्म दुक्ख क्षय हो जावें।
उत्तम गति बोधि समाधि पा, जिनवर गुण सब पा जावें।।

श्री आचार्य भक्ति

सिद्ध-गुणस्तुति निरता, नुद्धूतरुषाग्नि जालबहुल विशेषान्।
गुप्तिभिरभि संपूर्णान मुक्ति युतः सत्यवचन लक्षितभावान्।।1।।

चौपाई— परम सिद्ध गुण स्तुति करते, क्रोधाग्नि को क्षण में नशते।
पूर्ण गुप्ति मुक्ति संयुक्ता, सत्य वचन निर्मल अभिव्यक्ता।।1।।

मुनिमाहात्म्य विशेषान., जिनशासन सत्प्रदीप भासुरमूर्तीन्।
सिद्धिंप्रपित्सुमनसो, बद्धरजोविपुल मूलघातनकुशलान्।।2।।

मुनि महिमा के धारी होते, जिन शासन दीपक उद्योते।
उत्तम मन सिद्धि को चाहे, कर्ममूल नित ही विनशावे।।2।।

गुणमणि विरचितवपुषः षड्द्रव्य विनिश्चितस्यधातृन्सततम्।
रहितप्रमादचर्यान्, दर्शनशुद्धान् गणस्य संतुष्टि करान्।।3।।

गुण मणियों से विरचित तन हैं, षट द्रव्यों का नित चिंतन हैं।
अप्रमाद दर्शन से शुद्धा, साधु संघ सन्तुष्टि कर्ता।।3।।

मोहच्छिदुग्र तपसः प्रशस्त परिशुद्धहृदय शोभन व्यवहारान्।
प्रासुकनिलया ननघानाशा विध्वंसिचेतसो हतकुपथान्।।4।।

उग्र तपोसे मोह नशाया, शुद्ध प्रशस्त शुभ हृदय पाया।
जीव रहित प्रासुक घर रहते, मिथ्यापथ आशा नित दहते।।4।।

धारित विलसन्मुण्डान्वर्जित बहु दण्डपिण्ड मण्डल निकरान्।
सकलपरीषहजयिनः, क्रियाभिरनिशंप्रमादतः परिरहितान्।।5।।

दश मुण्डन से शोभित मुनिवर, वर्जित दण्ड पिंड से परिकर।
सकल परिषह जीतने वाले, अप्रमाद से रहने वाले।।5।।

अचलान्व्यपेत निद्रान, स्थानयुतान्कष्ट दुष्ट लेश्या हीनान।
विधिनाना श्रितवासा, नलिप्तदेहान्विनिर्जितेन्द्रिय करिणः।।6।।

अचल नींद जयशीला साधक, कष्ट दुष्ट लेश्या के नाशक।
नानाश्रित आवास विताते, लेप रहित इन्द्रिय जय पाते।।6।।

अतुला नुत्कुटिकासान्विविक्त चित्तानखंडित स्वाध्यायान।
दक्षिण भावसमग्रान् व्यपगत मदरागलोभ शठमात्सर्यान्।।7।।

उपमातीत आसन से रहते, हेयोपादेय चित में धरते।
क्षल मुक्ता हर क्षण अध्येता, राग द्वेष मदमत्सर जेता।।7।।

भिन्नार्तरौद्रपक्षान्संभावित, धर्मशुक्लनिम्रल हृदयान्।
नित्यंपिनद्धकुगतीन्, पुण्यान्गण्योदयान्विलीन गारवचर्यान्।।8।।

आर्त रौद्र का पक्ष नशाया, धर्म शुक्ल निर्मल हियपाया।
कुगति द्वार को बन्द किया है, गारव तज यश पुण्य लिया है।।8।।

तरुमूल योगयुक्ता, नवकाश तापयोग राग सनाथान्।
बहुजन हितकर चर्या न भयान नघान्महानुभाव विधानान्।।9।।

आतापन अभ्रावकाशा, तरु मूल में वर्षावासा।
बहुजन हित कर चर्या करते, अघ भय मुक्त प्रभावी रहते।।9।।

ईदृश गुणसंपन्नान् युष्मान्भक्त्या विशालया स्थिरयोगान्।
विधिनानारतमग्र्यान् मुकुलीकृतहस्तकमल शोभितशिरसा।।10।।

ऐसे गुण सम्पन्न यतिश्वर, स्थिर योगी महा ऋषिश्वर।
अंजलि बद्ध आवर्त किया है, शिरोनति शुभ हर्ष दिया है।।10।।

अभिनौमि सकलकलुष, प्रभवोदय जन्मजरामरण बंधन मुक्तान्।
शिवमचल मनघमक्षय मव्याहतमुक्ति सौख्यमस्तित्वति सततम्।।11।।

नमन कलुषता को विनशावें, जन्म जरा मृत मुक्त करावें।
अक्षय अचल अनघ अविनाशी, मुक्ति रमा के चिर अभिलाषी।।11।।

क्षेपकश्लोकानिः

श्रुतजलधिपारगेभ्यः, स्वपरमत विभावना पटुमतिभ्यः।
सुचरित तपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः।।

श्रुत सागर के पार गामी हो, स्व पर मतो के प्रखर ज्ञानी हो।
तपचारित्र निधि के स्वामी, महागुणी गुरु चरण नमामि।।11।।

छत्तीसगुणसमग्गे, पंचविहा चारकरण संदरिसे।
सिस्सा णुग्गहकुसले, धम्माइरिये सदा वंदे।।12।।
छत्तीस मूलगुणों के धारी, पंचाचार धरें उपकारी।
शिष्यानुग्रह अति निपुणा है, धर्माचार्य सदा नमना है।।12।।

गुरुभक्ति संजमेण य, तरंति संसार सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठकम्मं, जम्मणमरणं ण पावेंति।।13।।
गुरुभक्ति संयम तट धारे, भवसागर से पार उतारे।
अष्ट कर्म को सदा नशाते, जन्म मरण को कभी नपाते।।13।।

ये नित्यं व्रतमंत्र होमनिरता, ध्यानाग्नि होत्राकुलाः।
षट्कर्मा भिरतास्तपोधन धना, साधुक्रियाः साधवः।।
शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चंद्रार्क तेजोऽधिकाः।
मोक्षद्वार कपाट पाटनभटाः प्रीणंतु मां साध्वः।।14।।
दोहा— श्रुत मंत्रों को धार कर, करे कर्म की होम।
तपोधनी षटकर्म कर, पुण्य कमावे मौन।।
शील वस्त्र धारण किया, सूर्य चन्द्र से तेज।
मुक्ति द्वार पट खोलते, नमूं आचार्य विशेष।।14।।

गुरुवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानदर्शन नायकाः।
चारित्रार्णव गंभीरा, मोक्षमार्गोपदेशकाः।।15।।
रक्षा करे गुरुदेव जी, दर्शन ज्ञानी आप।
चारित्र सिन्धुधीर है, मोक्ष मार्ग प्रकाश।।15।।

प्राज्ञः प्राप्त समस्त शास्त्र हृदय, प्रव्यक्त लोकस्थितिः।
प्रास्ताशः प्रतिभापर प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः।।
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनो, हारी परानिन्दया।
ब्रूयाद्धर्मकथां गणी गुणनिधिः प्रस्पष्ट मिष्टाक्षरः।।16।।
प्रज्ञाधारी आगम ज्ञानी, लोक वृत्ति को जान रहे,
निष्प्रही प्रतिभाशाली हैं, प्रशमभाव अविराम कहे।

प्रश्नोत्तर पहले से जाने, नहीं प्रश्न पर क्रोध करे,
मनहर गुण निधि गणि अनिन्दा, मिताक्षरी संबोध करें।।16।।

श्रुतमविकलं शुद्धा वृत्तिः परप्रतिबोधने।
परिणतिरुद्योगो मार्ग प्रवर्तन सद्विधौ।।
बुधनुति रनुत्सेको, लोकज्ञता मृदुताऽस्पृहा।
यतिपति गुणा यस्मिन्नन्ये च सोऽस्तु गुरुः सताम्।।
पूर्ण ज्ञान वृत्ति की शुद्धि, पर उपदेश प्रवृत्ति है,
भव्य जीव को सम्यक पथ पर, गमन कराने वृत्ति है।
विद्वानों से पूज्य विनम्री कोमल निस्पृह व्यवहारी,
सतो गुणी लोकज्ञ मुनि ही, आचारजमय हितकारी।।17।।

इच्छमि भंते! आइरियभक्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण, सम्मदंसण सम्मचरित्त जुत्ताणं पंचविहा चाराणं आइरियाणं, आयारादि सुदणाणोव देसयाणं, उवज्झायाणं तिरयण गुणपाल णरयाणं, सव्वसाहुणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्कओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ-मज्झं।

हे प्रभु आचार्य भक्ति करके, कायोत्सर्ग किया मैंने।
उन दोषों की आलोचन कर, इच्छा है तब पद सेंने।।
सम्यकदर्शन ज्ञान चरण युत, पंचाचार के पालक है।
आचारांगादि द्वादशांङ्ग के, व्याख्याता गुणीपाठक हैं।।18।।

रत्नत्रय जो सदा पालते, सन्त दिगम्बर सदा नमूं।
पूजूं वन्दूँ दुख अघ क्षय हो, वोधि समाधि सदावरुँ।।
उत्तम गति की प्राप्ति होवे, हो समाधी पूर्वक अवसान।
जिनवर गुण की प्राप्ति होवे, यही प्रार्थना है भगवान।।19।।

श्री पञ्च गुरु भक्ति

श्रीमदमरेन्द्र-मुकुट-प्रघटित-मणि-किरण-वारि-धाराभिः।
प्रक्षालित-पद-युगलान्, प्रणमामि जिनेश्वरान् भक्त्या।।1।।
श्रीमद इंद्र मुकुट मणी रश्मि, जलधारा पद प्रक्षालित,
भक्ति भाव से अर्हत चरणम्, बारम्बार सदा वन्दित।।1।।

अष्टगुणैः समुपेतान् प्रणष्ट-दुष्टाष्ट-कर्मरिपु-समितीन्।
सिद्धान् सतत-मनन्तान्-नमस्करो मीष्ट तुष्टि संसिद्ध्यै।।2।।
अष्ट कर्म शत्रु को नाशे, अष्ट-महा गुण युक्त हुए,
इक्षित तुष्टि सिद्धि हेतु, नमूं सिद्ध जो मुक्त हुए।।2।।

साचार-श्रुत-जलधीन-प्रतीर्य शुद्धोरुचरण-निरतानाम्।
आचार्याणां पदयुग-कमलानि दधे शिरसि मेऽहम्।।3।।
शुद्ध सदा निर्दोष चरित के, पालन में आचार्य रहें,
श्रुत सिंधु को पार किया उन, गुरु पद को शिरोधार्य करे।।3।।

मिथ्यावादि-मदोग्र-ध्वान्तप्रध्वन्सि-वचनसंदर्भान्।
उपदेशकान् प्रपद्ये मम दुरितारि-प्रणाशाय।।4।।

निज वचनों से मिथ्यावादी के, मद अज्ञान तिमिर हरते,
पाप शत्रु के नाशन हारी, उपाध्याय चरणा नमते।।4।।

सम्यग्दर्शन-दीप-प्रकाशका-मेय-बोध-सम्भूताः।
भूरि-चरित्र पताकास्त साधु-गणास्तु माँ पान्तु।।5।।

सम्यक दर्शन दीप जलावें, ज्ञेय ज्ञान के ज्ञाता हैं,
ध्वज लहराते सुचरित्र की, साधु सुगुरु मम त्राता हैं।।5।।

जिनसिद्धसूरि-देशकसाधुवरानमल गुण गणोपेतान्।
पञ्चनमस्कार पदैस्त्रिसन्ध्य मभिनौमि मोक्ष लाभाय।।6।।

निर्मलानन्त गुणों के धारी, सिद्ध जिन सूरी पाठक,
त्रिसंध्या में पंच नमस्कृत, मोक्ष लाभ ले भवि साधक।।6।।

एषः पञ्चनमस्कारः, सर्व पाप प्रणाशनः।
मंग्रलानां च सर्वेषां, प्रथमं मंगलं भवेत्।।7।।

महामंत्र णमोकार जगत में, सर्व पाप का नाशक है,
मंगल में भी पहला मंगल, मोक्ष महाफल दायक है।।7।।

अर्हत्सिद्धाचार्यो-पाध्यायाः सर्व साधवः।
कुर्वन्तु मंगलाः सर्वे, निर्वाण परमश्रियम्।।8।।

अर्हंतसिद्धाचार्य कहे या, उपाध्याय साधु परमेश,
सभी सुमंगल पाप विनाशक, मुक्ति प्रदायक नमूं जिनेश।।8।।

सर्वान्जिनेन्द्रचंद्रान, सिद्धानाचार्यपाठकान्साधून्।
रत्नत्रयं च वंदे, रत्नत्रय, सिद्धये भक्त्या।।9।।

रत्नत्रय सिद्धि के हेतु, सर्व सिद्ध जिनेन्द्र नमूं,
पाठक सुरि साधु के संग, रत्नत्रय को सदा भंजु।।9।।

पांतु श्रीपाद पद्मानि, पञ्चानां परमेष्ठिनां।
लालितानि सुराधीश, चूड़ामणि मरीचिभिः।।10।।

देव इंद्र सेवा से शोभित, परमेष्ठी के चरण कमल,
प्रातिहार्य से अर्हत सज्जित, अष्ट गुणों से सिद्ध प्रबल।।10।।

प्रतिहार्यैर्जिनान् सिद्धान्, गुणैः सूरीन् स्वमातृभिः।
पाठकान्विनयैः साधून्, योगांगैरष्टभिःस्तुवे।।11।।

अष्ट प्रवचन धारे सूरिवर, चार विनय धारी उवज्झाय,
आठ योग से साधु पूजित, रक्षा करे मम मन से ध्याय।।11।।

इच्छामि भंते! पंचमहागुरु-भक्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-संजुत्ताणं, अरहंताणं, अट्ठ-गुण-सम्पण्णाणं, उड्ढलोय मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, सिद्धाणं, अट्ठ-पवय-णमउ संजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि सुदणाणेवदेसयाणं

उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण पालणरदाणं सव्वसाहुणं, सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

हे प्रभु! पंच गुरुभक्ति कर, कायोत्सर्ग किया मैंने।
उन दोषों की आलोचन कर, इच्छा है तवपद सेनें।।

आठ प्रातिहार्यों से शोभित, अरिहंताणं पावन है।
ऊर्ध्व लोक मस्तक पर राजित, सिद्धाणं मन भावन है।।

गुप्ति समिति प्रवचन माता, आचारज स्वीकार करे।
आचारांगी श्रुत ज्ञान को, उपाध्याय विस्तार करें।।

रत्नत्राय गुण पालन कर्ता सर्वसाधु जयवंत रहें।
अर्चन पूजन वन्दन से नित कर्म दुःख क्षयवंत रहें।।

बोधि समाधि प्राप्त करू मैं, सुगति में हो मेरा गमन।
जिनवर गुण सब सम्पत्ति पाऊँ, मिल जाये शुद्धात्म रमण।।

श्री शांति भक्ति

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्! पादद्वयं ते प्रजाः,
हेतुस्तत्र विचित्र दुःख निचयः संसार घोरार्णवः।
अत्यन्त स्फुरदुग्र रश्मि निकर व्याकीर्ण भूमण्डलो,
ग्रैष्मः कारयतीन्दु पाद सलिल च्छायानुरागं रविः।।1।।

नेह रहित हो द्वय चरणों की, शरण प्राप्त करते ज्ञानी,
कारण कर्म विचित्र दुक्ख पा, भव अर्णव डूबे प्राणी।
भूमण्डल को उष्ण किरण से, व्याप्त करें दिनकर जैसे,
चंद्र किरण जल छाया से ज्यों, राग सहज होता वैसे।।1।।

क्रुद्धाशींर्विष दष्ट दुर्जय विष ज्वालावली विक्रमो,
विद्या भेषज मन्त्र तोय हवनै र्याति प्रशान्तिं यथा।
तद् वत्ते चरणारुणाम्बुज युग स्तोत्रोन्मुखानां नृणाम्,
विघ्नाः काय विनायकाश्च सहसा शाम्यन्त्यहो विस्मयः।।2।।

क्रुद्ध सर्प का डंक जहर मय, या अग्नि ज्वाला लपटे,
विद्या औषध मन्त्र नीर या, हवनों से क्षण में निपटे।
हे प्रभु! तेरे चरण कमल की, भक्ति स्तुति आराधन,
काय रोग बाधा सब विनशे, इसमें विस्मय क्या भगवन।।2।।

सन्तप्तोत्तम काञ्चन क्षितिधर श्री स्पर्द्धि गौरद्युते,
पुंसां त्वच्चरण प्रणाम करणात् पीडाः प्रयान्तिक्षयं।
उद्यद्भास्कर विस्फुरत्कर शतव्याघात निष्कासिता,
नाना देहि विलोचन-द्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी।।3।।

स्वर्ण कांतिमय दीप्तिमान तन, क्षितिधर कांति को जीतें,
उगते सूरज की आभा से, अंधकार क्षण में रीतें।
शांतिनाथ की चरण-वंदना, हर पीड़ा क्षण में हरति,
नेत्र कान्ति तम हरने वाली, दिव्य प्रभा भक्ति भरती।।3।।

त्रैलोक्येश्वर भंग लब्ध विजयादत्यन्त रौद्रात्मकान्,
नाना जन्म शतान्तरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्र दावानलान्,
न स्याच्चेत्तव पाद पद्म युगल स्तुत्यापगा वारणम्।।4।।

तीन लोक के अधिपति नाशक, विजय श्री से क्रूर हुआ,
उग्र काल दावानल से ना, कौन बचा मजबूर हुआ।
शांति नाथ के चरण युगल की, भक्ति स्तुति जो गाये,
मृत्यु ज्वाला शीध्र शांत हो, सुख-मय मुक्ति को पायें।।4।।

लोकालोक निरन्तर प्रवितत् ज्ञानैक मूर्त्ते विभो!
नाना रत्न पिनद्ध दण्ड रुचिर श्वेतातपत्रत्रय।
त्वत्पाद द्वय पूत गीत रवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामया,
दर्पाध्मात मृगेन्द्रभीम निनदाद् वन्या यथा कुञ्जराः।।5।।

लोका-लोक के ज्ञाता मुनिवर, केवल ज्ञान की मूरत है,
रत्न जड़ित त्रयश्वेत छत्र से, मनहर शोभित सूरत हैं।
शांतिनाथ पद भक्ति गान से, रोग सभी नश जाते हैं,
सिंहराज की गर्जन सुन ज्यों, वन कुंजर छट जाते हैं।।5।।

दिव्य स्त्री नयनाभिराम विपुल श्री मेरु चूडामणे,
भास्वद् बाल दिवाकर-द्युतिहर प्राणीष्ट भामण्डल।
अव्याबाध मचिन्त्यसार मतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम्,
सौख्यं त्वच्चरणार विन्द युगल स्तुत्यैव संप्राप्यते।।6।।

दिव्यस्त्री नयनों के वल्लभ, द्विधा श्री है वृहद विशाल,
महा सूर्य सम भामण्डल है, महिमा तेरी करे निहाल।
अव्याबाधअचिन्त्य अविनाशी, उपमा तुलना रहित प्रभो,
चरण-कमल की स्तुति से ही, सुख मिलता अविलम्ब विभो।।6।।

यावन्नोदयते प्रभा परिकरः श्रीभास्करो भासयंस्,
तावद् धारयतीह पंकज वनं निद्रातिभार श्रमम्।

यावत्त्वच्चरण द्वयस्य भगवन्! न स्यात् प्रसादोदय-
स्तावज्जीव निकाय एष वहति प्रायेण पापं महत्।।7।।

सर्व दिशा आलौकित करता, दिनकर ना प्रगटित होता,
नीरज निद्रासीन प्रमादी, वह भी ना मुकुलित होता।
हे प्रभु! जब-तक चरण कमल की, कृपा वन्त न दृष्टि मिले,
तब-तक जीवों को पापों से, प्रायः मुक्ति नहीं मिले।।7।।

शान्तिं शान्ति जिनेन्द्र शान्त, मनसस् त्वत्पाद पद्मा श्रयात्।
संप्राप्ताः पृथिवी तलेषु बहवः, शान्त्यर्थिनः प्राणिनः।।
कारुण्यान् मम भाक्ति कस्य च विभो! दृष्टिं प्रसन्नां कुरु।
त्वत्पाद द्वय दैवतस्य गदतः, शान्त्यष्टकं भक्तिः।।8।।

हे शांतिनाथ! इस पृथ्वी तल पर, शान्ति के इक्षुक प्राणी,
शान्तमना हो चरण कमल का, आश्रय लेते सु-ज्ञानी।
चरण युगल आराध्य मानकर, शांत्याष्टक भक्ति पढ़ते,
करुणाधारी सम्यक निर्मल, दृष्टि से पावन करते।।8।।

शान्ति जिनं शशि निर्मल वक्त्रं, शीलगुण व्रत संयम पात्रम्।
अष्टशतार्चित लक्षण गात्रं, नौमि जिनोत्तम मम्बुज नेत्रम्।।9।।

चन्द्र कांति मय निर्मल मुख है, संयम व्रत गुण शील प्रमुख है
एक शतक अठ लक्षणधारी, शांति नमो नयनन् सुखकारी।।9।।

पञ्चम मीप्सित-चक्रधराणां, पूजित मिन्द्र-नरेन्द्र-गणैश्च।
शान्तिकरं गण-शान्ति-मभीप्सुः, षोडश-तीर्थकरं प्रणमामि।।10।।

पंचम चक्रवर्ती पद पाये, नर देवो ने पूज रचाये।
शांति चाहे शांति ध्याये, सोलम् तीर्थंकर सिर नाये।।10।।

दिव्यतरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टि-र्दुन्दुभिरासन-योजन घोषौ।
आतप-वारण-चामर-गुग्मे, यस्य विभाति च मण्डलतेजः।।11।।

तरु अशोक सुर पुष्प गिरावे, छत्र चँवर भामंडल भावे।
सिंहासन धुनि योजन आवे, दुंदुभि प्रातिहार्य कहलावे।।11।।

तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्रं, शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं, मह्यमरं पठते परमां च।।12।।

तीन लोक के पूज्य हितैषी, शांति नमे पाने सुखराशी।
सर्व गणों को शांति प्रदाता, स्तुति पढ़ सुख शांति पाता।।12।।

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत पादपद्माः।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपाः,
तीर्थंकराः सततशान्तिकराभवन्तु।।13।।

कुंडल मुकुट हार से शोभित, चरण कमल इन्द्रो से पूजित।
प्रवर वंश जग द्योतित कर्ता, तीर्थंकर श्री शांति प्रदत्ता।।13।।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवन्-जिनेन्द्र।।14।।

पूजन कर्ता रक्षा कर्ता, तपोनिधि आचार्य प्रवक्ता।
देश राष्ट्र पुर राजा होवे, श्री जिनेन्द्र शांति सुख देवे।।14।।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु, बलवान् धार्मिको भूमिपालः।
काले काले च सम्यग् वितरतु मघवा, व्याधयो यान्तु नाशम्।
दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां, मास्मभूज्जीव-लोके।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्व-सौख्य-प्रदायि।।15।।

चौपाई

सर्व प्रजा का हित मय जीवन, धार्मिक राजा बल युत पावन।
जल वृष्टि अनुकूल समय हो, सर्व व्याधियों का भी क्षय हो।।
चोरी मारी रोग क्षुधा ना, क्षण भर को भी दुख कही ना।
धर्म चक्र जिनदेव प्रभावी, सुख शांति समृद्धि प्रदायी।।15।।

तद् द्रव्य मव्यय मुदेतु शुभ स देशः, संतन्यतां प्रतपतां सततं सकालः।
भावः से नन्दतु सदा यदनुग्रहेण, रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षवर्गे।।16।।

मुनिपने की करूँ साधना, ऐसा निर्मल द्रव्य मिले।
रत्नत्रय की वृद्धि होवे, ऐसा क्षेत्र भी भव्य मिले।।
उत्तम संहनन मोक्ष प्राप्ति का, काल मिले निश्छल परिणाम।
आत्मानन्द की प्राप्ति होवे, बनूँ मुमुक्ष मुनि महान्।।16।।

प्रध्वस्त घाति कर्माणः, केवलज्ञान भास्कराः।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः।।17।।

ध्वंस किया कटु चार घातियाँ, केवल ज्ञान का उदय हुआ।
सुख शांति सर्वत्र जगत में, वृषभ वीर ने सदय किया।।17।।

अंचलिका

इच्छामि भंते! संतिभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, पञ्च महा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देवेंद-मणिमय मउड मत्थय महियाणं बलदेव वासुदेव चक्कहर रिसि-मुणि-जदि-अणगारोव गूढ़ाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महापुरिसाणं णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, गुगइमगणं, समाहि-मरणं जिणगुण सम्पत्ति मज्झं।

हे प्रभु! शांति-भक्ति करके, कायोत्सर्ग किया मैंने,
उन दोषों की आलोचन कर, इच्छा है तव पद सेनें।
पाँचों कल्याणक से पूरित, प्रातिहार्य से शोभित है,
मुकुट बद्ध इन्द्रो से वंदित, चौतीस अतिशय पूरित हैं।।18।।

नित्य काल अर्चन पूजन नत, वंदन बारम्बार करूँ,
दुक्खो का क्षय कर्मों का क्षय, रत्नत्रय स्वीकार करूँ।
मरण समाधि सुगति गमना, जिनवर गुण को प्राप्त करूँ,
मन वच तन जग शांति होवे, शांतिनाथ सम आप्त बनूँ।।19।।

श्री समाधि भक्ति

स्वात्माभिमुख-संवित्ति, लक्षणं श्रुत-चक्षुषा,
पश्यन्पश्यामि देव त्वां केवलज्ञान-चक्षुषा।।1।।

स्व सम्वेदन गुण युत जिनवर, श्रुत चक्षु से अवलोकन।
केवल ज्ञान चक्षु के धारी, अनुभव में होता दर्शन।।1।।

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः, संगति सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगण-कथा, दोषवादे च मौनम्।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे,
संपद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः।।2।।

जिन भक्ति शास्त्रों का अध्ययन, सन्त समागम सदा मिले।
सद्वृत्ति की कथा निरन्तर, दोष कथन तज मौन खिले।।
सर्व जीव से प्रिय हित वचना, आत्म तत्व का भाव रहे।
मोक्ष निकेतन मिले न जब तक, तब शरणा सद्भाव रहे।।2।।

जैनमार्गरुचिरन्यमार्ग निर्वेगता, जिनगुणस्तुतौ मतिः।
निष्कलंक विमलोक्ति भावनाः, संभवन्तु मम जन्मजन्मनि।।3।।

जिन मारग में रुचि बढ़ती हो, अन्य मार्ग से विरत रहे।
जिनवर का गुण-गाान करूँ नित, बुद्धि निर्मल सरित बहे।।
दोष रहित जिन उक्ति मुझको, जन्म-जन्म तक प्राप्त रहे।
सुनो प्रार्थना जिनवर मेरी, सदा आप मम आप्त रहें।।3।।

गुरुमूले यति-निचिते- चैत्यसिद्धान्त वार्धिसद्घोषे,
मम भवतु जन्म जन्मनि, सन्यसन समन्वितं मरणम्।।4।।

हे प्रभु! गुरुवर के पद पंकज, या यतियों का संघ मिले।
जिन प्रतिमा के दर्शन हो या, जिन शास्त्रों का श्रवण मिले।।
निर्मल मन पावन जीवन हो, यम नियम निर्दोष पले।
अंत समय संन्यास मरण हो, जैन धर्म जय घोष मिले।।4।।

जन्मजन्मकृतं पापं, जन्मकोटि समार्जितम्,
जन्ममृत्यु जरामूलं, हन्यते जिनवंदनात्।।5।।

दोहा— कोटि जन्म संचित किया, जन्म जरा मृत्यु पाप।
जिन दर्शन महिमा अगम, आत्म करे निष्पाप।।5।।

आबाल्याज्जिनदेवदेव! भवतः, श्री पादयोः सेवया,
सेवासक्त विनेय कल्पलतया, कालोऽद्ययावद्गतः।
त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना, प्राणप्रयाणक्षणे,
त्वन्नाम प्रतिबद्ध वर्णपठने, कण्ठोऽस्त्वकुण्ठो मम।।6।।

बचपन से अब तक प्रभु मैंने, जो भी सेवा भक्ति की।
कल्प लता सम फल दायी वह, चरण कमल अनुरक्ति की।।
उसके फल की एक कामना, जिनवर चरणों में करता।
मृत्यु क्षण तक नाम कण्ठ में, उच्चारण हो धर समता।।6।।

तवपादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्यावन्निर्वाण संप्राप्तिः।।7।।

दोहा— तव पदहिय धारण करूँ, मम् हिय तवपद लीन।
सदा विराजे देव जिन, मोक्ष मिले अघ क्षीण।।7।।

एकापि समर्थेयं, जिनभक्ति-दुर्गतिं निवारयितुम्।
पुण्यानि च पूरयितुं, दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः।।8।।

एक मात्र जिन भक्ति ही, दुर्गति दूर करेव।
पूरण पुण्य प्रदान कर, मुक्ति श्री भी देय।।8।।

पञ्च अरिजयणामे पञ्च,य मदि-सायरे जिणेवन्दे।
पञ्च जसोयर णामे, पञ्चय सीमंदरे वन्दे।।9।।

तीर्थंकर श्री बीस नम, पंच मेरु के जान।
अरि जय मतिसागर यशो, सीमंधर पच नाम।।9।।

रयणत्तयं च वंदे, चउवीस जिणे च सव्वदा वंदे।
पञ्चगुरुणां वंदे, चारणचरणं सदावंदे।।10।।

रत्नत्रय वंदन करूँ, तीर्थंकर चौबीस।
पंच गुरु प्रणमुं सदा, चारण चरणन शीश।।10।।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म, वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणिदध्महे।।11।।

अर्हं अक्षर आत्म का, शुद्ध स्वरूप कहाय।
सिद्ध चक्र का बीज पद, पूर्णरूप से ध्याय।।11।।

कर्माष्टक विनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मी निकेतनम्।
सम्यक्त्वादि गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम्।।12।।

कर्माष्टक से मुक्त है, मुक्ति निकेतन वास।
समकित आदि गुण सहित, सिद्ध नमाऊं माथ।।12।।

आकृष्टिं सुरसंपदां विदधते, मुक्तिश्रियो वश्यताम्,
उच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां, विद्वेषमात्मैनसाम्।
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो, मोहस्य सम्मोहनम्,
पायात्पञ्च नमस्क्रियाक्षरमयी, साराधना देवता।।13।।

महामंत्र है देवाकर्षक, मुक्ति श्री का वश कर्ता।
चतुर्गति विपदा का नाशक, आत्म पाप दोषक हर्ता।।
दुर्गति का स्तम्भन कर्ता, मोह कर्म का सम्मोहक।
महामंत्र अक्षरमयी अद्भूत, मम जीवन का हो रक्षक।।13।।

अनन्तानन्त संसार, संततिच्छेद कारणम्।
जिनराज पदाम्भोज, स्मरणं शरणं मम।।14।।

संतति सब संसार की, नाश करे जिन नाम।
याद सदा करते रहे, जिनवर के शुभ नाम।।14।।

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम।
तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर!।।15।।

अन्य नही शरणा यहाँ, श्रेष्ठ शरण है आप।
करूणा कर रक्षा करो, हे जिनवर निष्पाप।।15।।

नहित्राता नहित्राता, नहित्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति।।16।।

तीन लोक में आप बिन, रक्षक ना हैं कोई।
वीतराग सा देवता, हुआ नहीं ना होईं।।16।।

जिनेभक्ति र्जिनेभक्ति, र्जिनेभक्ति र्दिने दिने।
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु, सदामेऽस्तु भवे-भवे।।17।।

हर दिन हर भव भक्ति कर, भक्ति में सब खोय।
सदा काल भक्ति करूँ, और काम ना कोय।।17।।

याचेऽहं याचेऽहं, जिन! तव चरणारविंदयो र्भक्तिम्।
याचेऽहं याचेऽहं, पुनरपि तामेव तामेव।।18।।

तव चरणाम्बुज भक्ति की, करूँ याचना आज।
हे जिनेन्द्र! तव भक्ति की, पुनः पुनः हो लाभ।।18।।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत पन्नगाः।
विषो निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे।।19।।

तब चरणों की स्तुति से, भागे भूत पिशाच।
विष निर्विषता प्राप्त हो, विघ्नों का हो नाश।।19।।

इच्छामि भंते! समाहिभक्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, रयणत्तय सरूव परमप्पज्झाण लक्खणं समाहि-भत्तीये णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ, मज्झं।

हे प्रभु! समाधि भक्ति करके, कायोत्सर्ग किया मैंने।
उन दोषों की आलोचन कर, इच्छा हे तव पद सेनें।।

रत्नत्रय का रूप निरूपण, परमातम का ध्यान हो।
अर्चन पूजन वन्दन करता, शुद्धातम का भान हो।।

दुखों का क्षय कर्मों का क्षय, रत्नत्रय की वृद्धि हो।
सुगति गमना मरण समाधि, जिनवर गुण की सिद्धि हो।।

श्री निर्वाण भक्ति

विबुधपति खगपति नरपति धनदोरगभूतयक्ष पतिमहितम्।
अतुलसुख विमलनिरुपम शिवमचलमनामयं हि संप्राप्तम्।।1।।
नरदेवा धरणेन्द्र भुत व, खगधन यक्ष पति पूजें।
रोग रहित निर्दोष अनुपम, अविनाशी सुख न छुटे।।1।।

कल्याणैः-संस्तोष्ये पञ्चभिरनघं त्रिलोक परमगुरुम्।
भव्यजनतुष्टि जननैर्दुरवापेः सन्मतिं भक्त्या।।2।।
श्रेष्ठ गुरु कल्याणक धारी, सन्मति जिन को नमन करूँ।
भव्य जनों के तुष्टि कर्ता, वीर प्रभु का भजन करूँ।।2।।

आषाढ सुसितषष्ठ्यां हस्तोत्तर मध्यमाश्रितेशशिनि।
आयातः स्वर्ग सुखं भुक्त्वा पुष्पोत्तराधीशः।।3।।
पुष्पोत्तर से च्युत हो करके, शुक्ल षष्ठी आषाढ़ आये।
हस्तोत्तर के मध्य चन्द्रमा, स्वर्ग सुखों को भोग आये।।3।।

सिद्धार्थ नृपतितनयो भारतवास्ये विदेह कुण्डपुरे।
देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वप्रान् संप्रदर्श्य विभुः।।4।।
भारत में शुभ विदेह देश के, कुंडग्राम में स्वप्न दिखा।
प्रिय कारिणी माता प्यारी, सिद्धारथ नृप तनय खिला।।4।।

चैत्रसित पक्षफाल्गुनि शशांकयोगे दिने त्रयोदश्याम्।
जज्ञे स्वोच्चस्थेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने।।5।।
चेत शुक्ल तेरस के शुभ दिन, फाल्गुनी चन्द्र योग प्यारा।
सौम्य गृह स्व उच्च थानपर, चन्द्र हस्त नक्षत्र धारा।।5।।

हस्ताश्रिते शशांके चैत्र ज्योत्स्ने चतुर्दशीदिवसे।
पूर्वाह्णे रत्नघटैर्विबुधेन्द्राश्चक्रुरभिषेकम्।।6।।
चेत चांदनी छिटक रही थी, महावीर अवतार हुआ।
चौदस प्रातः रत्न कलश से, न्वहन हर्ष अपार हुआ।।6।।

भुक्त्वा कुमारकाले त्रिंशद्वर्षाण्यनंत गुणराशिः।
अमरोपनीत भोगान्सहसा भिनिबोधितोऽन्येद्युः।।7।।

तीस वर्ष तक युवा काल में, देव रचित भोगे सब भोग।
सहसा वैरागी बन करके, करने लगे आत्म का शोध।।7।।

नानाविधरूपचितां विचित्र कूटोच्छ्रितां मणिविभूषाम्।
चन्द्रप्रभाख्यशिविका मरुह्य पुराद्विनिः क्रान्तः।।8।।

सुंदर ऊँची मणियों सज्जित, चन्द्रप्रभा शिविका लाये।
आरोहण हो वीर प्रभु जी, कुंडलपुर बाहर आयें।।8।।

मार्गशिर कृष्णदशमी हस्तोत्तर मध्यमाश्रिते सोमे।
षष्ठेन त्वपराह्णे भक्तेन जिनः प्रवव्राज।।9।।

मगसिर कृष्ण पक्ष की दशमी, हस्तोत्तर पर चन्द्र रहा।
सन्ध्या दो उपवास नियम ले, दीक्षा ली निर्ग्रन्थ महा।।9।।

ग्रामपुर खेट कर्वटमटंब घोषाकरान्प्रविजहार।
उग्रैस्तपो विधानैर्द्वादश वर्षाण्यमर पूज्यः।।10।।

ग्रामाकर कर्वट मटम्ब या, खेट घोष पुर भ्रमण किया।
उग्र तपोनिधि अमर पूज्य ने, बारह वर्ष तक गमन किया।।10।।

ऋजुकुलायास्तीरे शाल्मद्रुम संश्रिते शिलापट्टे।
अपराह्णे षष्ठेनास्थितस्य खलु जृंभिकाग्रामे।।11।।

ऋजुकुलातट ग्राम जृम्भिका शाल्मली वृक्ष की छाँव तलें।
दो उपवास ग्रहण सन्ध्या में, शिला विराजे ध्यान तलें।।11।।

वैशाखसित दशम्यां हस्तोत्तर मध्यमाश्रिते चन्द्रे।
क्षपक श्रेण्यारूढस्योत्पन्न केवल ज्ञानम्।।12।।

क्षपक क्षेणी आरोहण करते, केवल ज्ञान प्रकाश हुआ।
वैशाख सुदी दसमी हस्तोत्तर, चन्द्रवास अघ नाश किया।।12।।

अथ भगवान् संप्रापद्-दिव्यं वैभारपर्वतं रम्यम्।
चातुर्वर्ण्य सुसंघस्तत्रा भूद् गौतम प्रभृति।।13।।

दिव्य रम्य वैभार गिरि पर, वीर केवली रहे विराज।
गौतम स्वामी चार संघ सह, एकत्रित शोभे सरताज।।13।।

छत्राशोकौ घोषं सिंहासन दुंदुभि कुसुमवृष्टिम्।
वरचामर भामण्डल दिव्यान्यन्यानि चावापत्।।14।।

दिव्य क्षत्र भामंडल दुंदुभि, चँवर पुष्प वृष्टि सुखकार।
सिंहासन तरु वृक्ष अशोका, दिव्यध्वनि है मंगलकार।।14।।

दसविध मनगाराणामेका दशधोत्तरं तथा धर्मम्।
देशयमानो व्यवहरंस्त्रिंशद्वर्षाण्यथ जिनेन्द्र।।15।।

प्रथम देशना दशविध मुनिवर, श्रावक ग्यारह प्रतिमाधार।
तीस वर्ष तक करे विहारा, भव्य जीव करने उद्धार।।15।।

पद्मवनदीर्घिका कुल विविध द्रुमखण्ड मण्डिते रम्ये।
पावा नगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः।।16।।

पद्मवन वापी तरु शोभित, पावा नगरी का उद्यान।
कायोत्सर्ग में स्थिर होकर, सन्मति धारे शुक्ल ध्यान।।16।।

कार्तिककृष्ण स्यान्ते स्वाता वृक्षे निहत्य कर्मरजः।
अवशेषं संप्रापद्व्यजरा मरमक्षयं सौख्यम्।।17।।

कार्तिक कृष्णा स्वाति नक्षत्र, शेष अघाती नाश किया।
सर्व कर्म से मुक्त हुए प्रभु, अजरामर सुख वास लिया।।17।।

परिनिर्वृत्तं जिनेन्द्रं ज्ञात्वा विबुधाह्यथासु चागम्य।
देवतरुरक्तचन्द कालागरु सूरभिगो शीर्षैः।।18।।

दोहा— वीर मुक्ति को जानकर, चतुर्निकाय भी आय।
देव तरू चंदन सुरभि, जिनवर पूज रचाय।।18।।

अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानल सुरभि धूपवरमाल्यैः।
अभ्यर्च्य गणधरानपि गतादिवं खं च वनभवने।।19।।
अग्नि कुमार ने मुकुट से, दिव्य अनल प्रगटाय।
संस्कार अंतिम किया, गणधर निजघर जाए।।19।।

इत्येवं भगवति वर्धमान चन्द्रे,
यः स्तोत्रं पठति सुसंध्ययोर्द्वयोर्हि।
सोऽनन्तं परमसुखं नृदेवलोके,
भुक्त्वान्ते शिवपद मक्षयं प्रयाति।।20।।
महावीर की स्तुति, द्विसंध्या में गाय।
नरदेवा सुख भोग कर, अविनाशी पदपाय।।20।।

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुत पारगाणां,
निर्वाण भूमिरिह भारतवर्ष जानाम्।
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभिः,
संस्तोतु मुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या।।21।।
जम्बू द्वीप में भारत सुंदर, तीर्थंकर गणधर जन्मे।
अर्हत् श्रुतधर मोक्ष भूमि की, बुद्धिमान भक्ति रचते।।
मन वच तन की शुद्धि पूर्वक, अर्चन वंदन करता हूँ।
मंगल मय यह आर्यखण्ड है, निर्ग्रन्थों को भजता हूँ।।21।।

कैलाश शैलशिखरे परिनिर्वृतोऽसौ,
शैलेशि भावमुप पद्य वृषो महात्मा।
चम्पापुरे च वसुपूज्य सुतः सुधीमान्,
सिद्धिं परामुपगतो गतराग बन्धः।।22।।

शील अठारह सहस स्वामी है, आदिनाथ भगवान महान।
अष्टापद से मोक्ष पधारे, वीतराग है अतिशयवान।।
वसुपुज्य के पुत्र कहाते, वासुपूज्य है गुनी महान।
बाल ब्रह्मचारी तीर्थंकर, चम्पापुर से मुक्ति प्रयाण।।22।।

यत्प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः,
पाखण्डिभिश्च परमार्थगवेष शीलैः।
नष्टाष्ट कर्म समये तदरिष्टनेमिः,
संप्राप्तवान् क्षितिधरे वृहदूर्जयन्ते।।23।।

आत्म खोज करने वाले सब, पाखण्डी या इंद्र महान।
करे प्रार्थना मुक्ति प्राप्ति, अपने अपने मत की मान।।
उस मुक्ति को नेमिनाथ ने, कर्म नशा कर पाया है।
ऊर्जयन्त महापर्वत से, सिद्धालय सुख पाया है।।23।।

पावापुरस्य बहिरुन्नत भूमिदेशे,
पद्मोत्पला कुलवतां सरसां हि मध्ये।
श्री वर्द्धमान जिनदेव इति प्रतीतो,
निर्वाणमाप भगवान्प्रविधूतपाप्मा।।24।।

पावापुर के बाहर सुंदर, ऊँचा पदम् सरोवर है।
कमलों से वह व्याप्त मध्य पर, वर्धमान जिन ईश्वर है।।
पाप नशाकर प्रातः बेला, शाश्वत शिव सुख पाया है।
पावापुर की सिद्ध भूमि को, शत-शत शीष नवाया है।।24।।

शेषास्तु ते जिनवरा जितमोहमल्ला,
ज्ञानार्क भूरि करणै रवभास्य लोकान्।
स्थानं परं निरवधारित सौख्यनिष्ठं,
सम्मेद पर्वततले समवा पुरीशाः।।25।।

जीत लिया है मोह महल को, ऐसे बीस जिनेश्वर हैं,
ज्ञान सूर्य की दिव्य प्रभा से, लोक प्रकाशक जिनवर हैं।
तीर्थराज सम्मेद शिखर से, मोक्ष महल को पाया है।
चरणों में त्रैकालिक वंदन, करके मन हर्षाया है।।25।।

आद्यश्चतुर्दशदिनैर्विनवृत योगः,
षष्ठेन निष्ठित कृतिर्जिन वर्द्धमानः।
शेषाविधूत घनकर्म निबद्धपाशाः,
मासेन ते यतिवरांस्त्व भवन्वियोगाः।।26।।

ऋषभ देव ने चौदह दिन तक, योग निरोध किया प्यारा।
वर्धमान ने दो दिन पहले, योग निरोधा सुख कारा।।
बाइस जिनवर एक मास तक, योगों का निरोध किया।
दृढ़तर कर्म जाल को तजकर, सिद्ध शिला सुख भोग लिया।।26।।

माल्यानि वक्स्तुति मयैः कुसुमैः सुदृब्धा-
न्यादाय मानसकरै रभितः किरन्तः।
पर्येम आदृतियुता भगवन्निषद्याः,
संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः।।27।।

वचन पुष्प से स्तुति करने, माला गुंथी सुंदर है।
मनरूपी हाथों में लेकर, पुष्प बिखेरे मनहर है।।
चौबीसी की मोक्ष भूमि की, परिक्रमा हो आदर से।
सिद्धगति की प्राप्ति होवें, करूँ प्रार्थना जिनवर से।।27।।

शत्रुञ्जये नगवरे दमितारिपक्षाः,
पण्डोः सुताः परम निर्वृति मभ्युपेताः।
तुंग्यां तु संगरहितो बलभद्रनामा,
नद्यास्तटे जिनरिपुश्च सुवर्णभद्रः।।28।।

दोहा— शत्रुपक्ष को नष्ट किया पांडु पुत्र महान।
शत्रुन्जय से कर्मनशा पायापद निर्वाण।।
सर्वपरिग्रह छोड़कर तुंगीगिरी में ध्यान।
बलभद्र मुनिराज है वैरागी निष्काम।।
नदी चेलना तीर जा स्वर्णभद्र मुनिराज।
द्रव्य भाव सर्वकर्मतज-पाया मुक्तिराज।।28।।

द्रोणीमति प्रबलकुण्डल मेढ्रके च,
वैभारपर्वततले वरसिद्धकूटे।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रि बलाहके च,
विन्ध्ये च पोदनपुरे वृषदीपके च।।29।।

सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे,
दण्डात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाताः,
स्थानानि तानि जगति प्रथितान्य भूवन्।।30।। युग्मं

द्रोणगिरी कुंडल मुक्तागिर, विपुलाचल वैभार गिरी।
कूट सिद्धवर सोनागिर अरु, बलाहक और विंध्यगिरि।।
धर्म प्रकाशक पोदनपुर अरु, सहयाचल या गजपंथा।
हो पर्वत वंशस्थ हिमालय, तप कीना जह जह संता।।
कर्म नाशकर सिद्ध बने वह, भूमि पावन पूजित है।
सिद्ध क्षेत्र शुभ नाम पुकारा, भव्य जनों से वन्दित है।।29-30।।

इक्षोर्विकार रसपृक्त गुणेन लोके,
पिष्टोऽधिकं मधूरता मुपयाति यद्वत्।
तद्वच्च पुण्यपुरुषै रुषितानि नित्यं,
स्थानानि तानि जगता मिह पावनानि।।31।।

दोहा— इक्षुरस संग करे, आटा मधुरिम होय।
पूज्य पुरुष के संग से, भू वन पावन होय।।31।।

इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां,
प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृति भूमि देशाः।
तेमे जिना तिनभया मुनयश्च शांताः,
दिश्यासुराशु सुगतिं निरवद्य सौख्याम्।।32।।

मेरे द्वारा साम्य भाव मुनि, तीर्थंकर की भक्ति है।
जिस भूमि से मोक्ष पधारे, उस भूमि की स्तुति है।।
सप्त भयो से मुक्त जिनेश्वर, शांत स्वभावी श्री मुनिराज।
अक्षय सुख उत्तम गति साता, प्रणमुँ जगति के ऋषिराज।।32।।

क्षेपकश्लोकानि

कैलाशाद्रौ मुनीन्द्रः पुरुरपदुरितो मुक्तिमाप प्रणूतः।
चंपायां वासुपूज्यस्त्रिदश पतिनुतो नेमिरप्यूर्जयंते।।1।।

पावायां वर्धमानस्त्रिभुवन गुरवो विंशतिस्तीर्थनाथाः।
सम्मेदाग्रे प्रज्गामुर्ददतु विनमतां निवृतिं नो जिनेन्द्राः।।2।।

पाप मुक्त पुरुदेव ऋषभ जी, मोक्ष पधारे गिरी कैलाश।
वासुपूज्य इन्द्रो से वन्दित, चम्पापुर कर्मन की नाश।।1।।

नेमिनाथ उर्ज्यन्त गिरी से, वर्धमान पावापुर धाम।
त्रिभुवन गुरुवर बीस जिनेश्वर, सम्मेदाचल नमुँ निर्माण।।2।।

गोर्गजोश्वः कपिः कोकः सरोजः स्वस्तिकः शशी।
मकरः श्रीयुतो वृक्षो गंडो महिष सूकरौ।।3।।

सेधा वज्र मृगच्छागाः पाठीनः कलशस्तथा।
कच्छपश्चोत्पलं शंखो नागराजश्च केसल।।4।।

गो गज घोड़ा वानर चकवा, कमल साथिया चन्द्र महा।
मगर कल्प तरु गैंडा भैंसा, सूकर सेही बज्र कहा।।3।।

हिरण बकरा मीन कलश अरु, कच्छप कमल शंख अहि शेर।
चौबीसी के चिन्ह क्रमशः, पहचानो ना करना देर।।4।।

शान्ति कुन्थवर कौरव्या यादवौ नेमिसुव्रतौ।
उग्रनाथौ पार्श्ववीरौ शेषा ईक्ष्वाकुंवशजाः।।5।।

शांति कुन्थ अर कुरु वंश में, नेमि सुव्रत यदुवंशी।
पार्श्व वीर जी उग्र नाथ में, सत्रह इक्ष्वाकु वंशी।।

वंश गोत्र जाति सब बाहर, सामाजिक पहचान हैं।
इनसे ऊपर उठे तीर्थंकर, शत शत मेरा प्रणाम है।।5।।

इच्छामि भंते! परिणिव्वाणभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, इमम्मि, अवसप्पिणीए चउत्थ समयस्स पच्छिमे भाए, आउट्ठमासहीणे वासचउक्कम्मि सेसकालम्मि, पावाए णयरीए कत्तिय मासस्स किण्ह चउदसिए रत्तीए सादीए, णक्खत्ते, पच्चूसे, भयवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो। तिसुवि लोएसु, भवणवासिय-वाणविंतर जोयिसिय कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं अच्चंति पूजंति, वंदंति, णमंसंति परिणिव्वाण महाकल्याण पुज्जं करंति। अहमवि इह संतो तथ्य संताइयं णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहि-मरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

हे प्रभु! परिनिर्वाण भक्ति कर, कायोत्सर्ग किया मैंने।
उन दोषों की आलोचन कर, इच्छा है तव पद सेनें।।

अवसर्पिणी में चौथे काल के तीन माह कम चार बरस।
शेष रहा तब पावापुर में कार्तिक मास वदी चौदस।।

रात्रि स्वाति शुभ नक्षत्रे ब्रह्म काल महति महावीर।
मोक्ष पधारे वर्धमान जिन खुशी मनाते देव शरीर।।

भवनवासी व्यन्तर ज्योतिषी कल्पवासी धरती आये।
दिव्य नीर गन्धाक्षत लेकर पूजा कर अति हर्षाये।।

दिव्य पुष्प नैवेद्य दीप अरु धूप फलों से थाल सजा।
कल्याणक की अर्चा पूजा, नित्य करे कर ताल बजा।।

कल्याणक निर्वाण क्षेत्र की मैं भी अर्चा पूजा करूँ।
करूँ वंदना नमस्कार कर अघ दुख क्षय हो भाव धरू।।

रत्नत्रय की प्राप्ति होवे, सुगति में हो गमन मेरा।
मरण समाधि जिन गुण प्राप्ति, सिद्धालय हो चमन मेरा।।

श्री नन्दीश्वर भक्ति

त्रिदश पति मुकुट तट गतमणि, गणकर निकर सलिल धारा धौत।
क्रम कमल युगल जिनपति रुचिर, प्रतिबिम्ब विलय विरहित निलयान्।।1।।

इंद्र मुकुट मणि किरण धार से, चरण युगल प्रक्षालित हैं,
अविनाशी सुंदर मनभावन, जिन प्रतिमा सु-विराजित हैं।।1।।

निलयानह मिह महसां सहसा, प्रणिपतन पूर्व मवनौम्यवनौ।
त्रय्यां त्रय्या शुद्धा निसर्ग, शुद्धान्विशुद्धये धनरज साम्।।2।।

तीन लोक के तेज पुंज हैं, शुद्ध स्वाभाविक जिन भवना।
कर्म नाशने त्रय योगों से, शीश झुकाकर नित नमना।।2।।

भावनसुर-भवनेषु, द्वासप्तति-शत-सहस्र-संख्याभ्यधिकाः।
कोट्यः सप्त प्रोक्ता, भवनानां भूरि-तेजसां भुवनानाम्।।3।।

भवन वासी के हर भवनों में, जिन चैत्यालय सुंदर हैं,
सात कोटि अरूँ लाख बहत्तर, दिव्य दीप्ति युत मनहर हैं।।3।।

त्रिभुवन-भूत-विभूनां, संख्यातीतान्यसंख्य-गुण-युक्तानि।
त्रिभुवन-जन-नयन-मनः, प्रियाणि भवनानि भौम-विबुध-नुतानि।।4।।

त्रिभुवन जन मन नयनार्कषक, असंख्यात गुण युक्त प्रभों।
व्यन्तर पूजित त्रिभुवन नायक, असंख्यात जिन चैत्य विभो।।4।।

यावन्ति सन्ति कान्त-ज्योति-र्लोकाधि देवता भिनुतानि।
कल्पेऽनेक-विकल्पे, कल्पातीतेऽहमिन्द्र कल्पानल्पे।।5।।

ज्योतिष देवो के विमान है, चैत्यालय उतने जाने।
आकृत्रिम है ज्योति पुंज है, देव नमो शिव सुखपाने।।5।।

विंशतिरथ त्रिसहिता सहस्रगुणिता च सप्तनवतिः प्रोक्ता।
चतुरधिकाशीतिरतः, पञ्चकशून्येन विनिहता न्यनघानि।।6।।

कल्पवासी सौधर्म स्वर्ग के, अहमिन्द्रों तक देव बड़े।
पाप मुक्त सुंदर जिन मंदिर, भक्ति करे-कर जोड़ खड़े।।

चौरासी लख सहस सतानवे, तेईस आकृत्रिम जिनराज।
नमो-नमो सब देव चैत्य को, पाने मुक्ति का साम्राज्य।।6।।

अष्टापञ्चाशदतश्-चतुःशतानीह मानुषे च क्षेत्रे।
लोकालोक विभागप्रलोकनाऽऽलोक संयुजांजयभाजाम्।।7।।

लोकालोक विभाग देखते, दर्शन ज्ञानी अरिहंता।
चार शतक अट्ठावन प्रतिमा, अकृत्रिम जिन भगवन्ता।।7।।

नव नवचतुः शतानि च, सप्त च नवतिः सहस्र गुणिताः षट् च।
पञ्चाशत्पञ्च-वियत्, प्रहताः पुनरत्र कोटयोऽष्टौप्रोक्ताः।।8।।

त्रिभुवन देवो द्वारा पूजित, आकृत्रिम जिन भवन अहो।
आठ कोटि छप्पन लक्षा अरूँ, सत्तावन हज्जार कहो।।8।।

एतावन्त्येव सता-मकृत्रि-माण्यथ जिनेशिनां भवनानि।
भुवन-त्रितये त्रिभुवन-सुर-समिति-समर्च्यमान-सप्रतिमानि।।9।।

चार शतक इक्यासी जोड़ें, प्रतिमा मनहर पावन है।
नमन करे सब वीतराग जिन, दर्शन शुभ मन भावन है।।9।।

वक्षार-रूचक-कुण्डल-रौप्य-नगोत्तर-कुलेषुकार नगेषु।
कुरुष च जिनभवनानि, त्रिशतान्यधिकानि तानि षड्विंशत्या।।10।।

वक्षार रूचक कुंडल रजतांचल, मानुषोत्तर गिरी विशाल।
श्रेष्ठ कुलाचल इष्वाकार कुरूँ, देवोत्तर मंदिर है मिशाल।।
तीन शतक छब्बीस जिनालय, मेरु नंदीश्वर जोड़े।
चार सौ अट्ठावन जिन प्रतिमा, वंदन कर बन्धन तोड़े।।10।।

नन्दीश्वर-सद्द्वीपे, नन्दीश्वर-जलधि-परिवृते धृत-शोभे।
चन्द्र-कर-निकर-सन्निभ-रुन्द्र यशो वितत दिङ् मही मण्डलके।।11।।

चन्द्र किरण सम सघन यशो से, चउदिशा पृथ्वी व्याप्त करा।
नन्दीश्वर सागर से वेष्ठित, शोभा धारे अति महा।।11।।

तत्रत्याञ्जन-दधिमुख-रतिकर-पुरु-नग-वराख्य-पर्वत-मुख्याः।
प्रतिदिश-मेषा-मुपरि, त्रयो-दशेन्द्रार्चितानि जिनभवनानि।।12।।

नन्दीश्वर शुभ द्वीप दिशा में, अंजन दधिमुख रतिकर नाम।
तेरह पर्वत के ऊपर जिन, इन्द्र भक्ति कर करे प्रणाम।।12।।

आषाढ़-कार्तिकाख्ये, फाल्गुनमासे च शुक्लपक्षेऽष्टम्याः।
आरभ्याष्ट-दिनेषु च, सौधर्म-प्रमुख-विबुधपतयो भक्त्या।।13।।

एक वर्ष में तीन अठाई, आषाढ़ कार्तिक फाल्गुन का।
शुक्ल पक्ष की आठे आरंभ, आठ दिनों तक जिनगुण गा।।13।।

तेषु महामह-मुचितं प्रचुराक्षत-गन्ध-पुष्प-धूपै-र्दिव्यैः।
सर्वज्ञ-प्रतिमाना-मप्रतिमानां प्रकुर्वते सर्व-हितम्।।14।।

सौधर्म इंद्र सब इंद्र शतक ले, पूजे चैत्यालय बावन।
प्रचुर गन्ध अक्षत पुष्पम् अरु, दिव्य धूप ले मन भावन।।14।।

भेदेन वर्णना का, सौधर्मः स्नपन-कर्तृता मापन्नः।
परिचारक-भावमिताः शेषेन्द्रा रुन्द्र चन्द्र निर्मल यशसः।।15।।

सौधर्म इंद्र अभिषेक कृत्य का, वर्णन क्या विशेष करें।
निर्मल यश पूनम चंदा सम, अन्य देव सहयोग करें।।15।।

मंगल-पात्राणि पुनस्तद्-देव्यो बिभ्रतिस्म शुभ्र-गुणाढ्याः।
अप्सरसो नर्तक्यः, शेष-सुरास्तत्र लोकना व्यग्रधियः।।16।।

उज्ज्वल गुण युत दिव्य देवियाँ, आठो मंगल द्रव्य लिए।
न्यवहन लखे सब देव खुशी से, अप्सरायें नृत्य किए।।16।।

वाचस्पति-वाचामपि, गोचरतां संव्यतीत्य यत्-क्रममाणम्।
विबुधपति-विहित-विभवं, मानुष-मात्रस्य कस्य शक्तिः स्तोतुम्।।17।।

नन्दीश्वर में अष्टान्हिक में, देवों द्वारा पूजा हो।
ठाठ बाट का क्या कहना, भक्ति नृत्य ना दूजा हो।।

बृहस्पति भी गुण वर्णन हो, नासमर्थ हो पाता है।
साधारण जन वैसी पूजा, कहो कहाँ कर पाता है।।17।।

निष्ठापित-जिनपूजाश्-चूर्ण-स्नपनेन दृष्ट विकृत विशेषाः।
सुरपतयो नन्दीश्वर-जिनभवनानि प्रदक्षिणीकृत्य पुनः।।18।।

चूर्ण सुगंधित लेकर के वह, महाभिषेक रचाता है।
आनंदित तन विकृत लगता, परिक्रमा भी लगाता है।।18।।

पञ्चसु मंदरगिरिषु, श्रीभद्रशालनन्दन-सौमनसम्।
पाण्डुक वनमिति तेषु, प्रत्येकं जिनगृहाणि चत्वार्येव।।19।।

मन्दर भद्रशाल नन्दन अरु, सोमनस पांडुक बन हैं।
चारों वन में चउ-चउ मन्दिर, प्रदक्षिणा कर वंदन है।।19।।

तान्यथ परीत्य तानि च, नमसित्वा कृतसुपूजनास्तत्रापि।
स्वास्पदमीयुः सर्वे, स्वास्पदमूल्यं स्वचेष्टया संगृह्य।।20।।

उत्तम भक्ति युक्त हो करके, पूजा-पाठ रचाते हैं।
देव सभी स्वयोग्य पुण्यवर, अपने घर को जाते हैं।।20।।

सहतोरणासद्वे दी-परीतवनयाग-वृक्ष-मानस्तम्भः।
ध्वजपंक्ति दशकगोपुर, चतुष्टयत्रितय-शाल-मण्डप-वर्यैः।।21।।

आकृत्रिम चैत्यालय तोरण, याग वृक्ष वन शोभित है।
मानस्तम्भ दश कोटि ध्वजाऐ, चउगोपुर मन मोहित हैं।।21।।

अभिषेकप्रेक्षणिका, क्रीडन संगीत नाटकालोकगृहैः।
शिल्पिविकल्पित-कल्पन-संकल्पातीत-कल्पनै समुपेतै।।22।।

चतुर शिल्पियों से परिकल्पित, मण्डप से अभिषेक लखे।
क्रीड़ा नाटक संगीतों से, मण्डप सुंदर सजे धजे।।22।।

वापी सत्पुष्करिणी, सुदीर्घिकाद्यम्बु संसृतैः समुपेतैः।
विकसित जलरुहकुसुमै-र्नभस्यमानैः शशिग्रहर्क्षैः शरदि।।23।।

खिले कमल पुष्पों के कारण, गगन चन्द्र गृह तारा सम।
पुष्करिणी सुदीर्घ जलाशय, एक शतक अठ उपकरणम।।23।।

भृंगाराब्दक-कलशा, द्युपकरणैष्ट शतक-परिसंख्यानैः।
प्रत्येकं चित्रगुणैः, कृतझणझण निनद-वितत-घंटाजालैः।।24।।

झारी दर्पण कलशा झन-झन, घंटा स्वर विस्मय कारी।
गन्ध कुटी में गर्भ गृह का, सिंहासन वैभव भारी।।24।।

प्रविभाजंते नित्यं, हिरण्मयानीश्चरेशिनां भवनानि।
गंधकुटीगतमृगपति, विष्टर रुचिराणि विविध विभव युतानि।।25।।

जिनवर का स्वर्णिम जिन भवना, आकृत्रिम अति सुंदर है।
दर्शन पूजन वंदन से नित, सूखे पाप समन्दर है।।25।।

येषु-जिनानां प्रतिमाः, पञ्चशत-शरासनोच्छ्रिताः-सत्प्रतिमाः।
मणिकनक-रजतविकृता, दिनकरकोटि-प्रभाधिक प्रभदेहाः।।26।।

धनुष पाँच सौ ऊँची सुंदर, आकृतिम जिन प्रतिमा हैं।
स्वर्ण मणि चांदी से निर्मित, कोटि प्रभाधिक किरणा है।।26।।

तानि सदा वंदेऽहं, भानु प्रतिमानि यानि कानि च तानि।
यशसां महसां प्रतिदिश-मतिशय शोभा विभाज्जि पाप विभाज्जि।।27।।

दिव्यतेज यश शोभावाली, पाप नष्ट कर देती हैं।
नन्दीश्वर के जिन चैत्यालय, वंदन कल्मष धोती हैं।।27।।

सप्तत्यधिक-शतप्रिय, धर्मक्षेत्रगत-तीर्थकर-वर-वृषभान्।
भूतभविष्यत् संप्रति-काल भवान् भवविहानये विनतोऽस्मि।।28।।

भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर का वंदन है,
एक सौ सत्तर तीर्थंकर के, धर्म क्षेत्र प्रिय अर्चन हैं।
पापनाश भवभ्रमण छेद को, विधी पूर्वक वन्दन करता,
भरतैरावत विदेह क्षेत्र में, धर्म सदा वर्तन करता।।28।।

अस्यामवसर्पिण्यां, वृषभजिनः प्रथमतीर्थकर्ता भर्ता।
अष्टापदगिरिमस्तक, गतस्थितो मुक्तिमाप पापान्मुक्त।।29।।

अवसर्पिणी के तृतीय काल के, प्रथम तीर्थंकर आदि जिनेश,
षट कर्मप्रदाता जीवनदाता, करुणाधारी है अखिलेश।

अष्टापद गिरी मस्तक पर जा, ध्यान लगाया पद्मासन,
पाप मुक्त हो कर्म नाशकर, सिद्धालय को किया गमन।।29।।

श्रीवासुपूज्यभगवान्, शिवासु पूजासु पूजितस्त्रिदशानाम्।
चम्पायां दुरित-हरः, परमपदं प्रापदापदा-मन्तगतः।।30।।

अतिशय शोभा धारी भगवन, शत इन्द्रों से पूजित हैं,
बाह्याभ्यन्तर लक्ष्मी युक्त श्री, वासुपूज्य जिन शोभित है।
आपत्ति का नाश किया है, पापों का क्षय कर दीना,
चम्पापुर मंदार गिरी से, सिद्धालय का सुख लीना।।30।।

मुदित मतिबलमुरारि-प्रपूजितो जित कषायरिपुरथ जातः।
वृहदूर्जयन्त-शिखरे, शिखामणि स्त्रिभुवनस्य-नेमिर्भगवान्।।31।।

हो प्रसन्न नित पूजा करते, नारायण बलराम सदा,
सर्व कषायों को जीता है, ध्यान लगाकर भव भीता।
वृहद गिरी गिरनार शिखर पर, नेमिनाथ निजध्याया हैं,
तीन लोग के शिखामणि बन, सिद्धालय सुख पाया है।।31।।

पावापुर वरसरसां मध्यगतः सिद्धिवृद्धि तपसां महसाम्।
वीरो नीरदनादो, भूरि-गुणश्चारु शोभमास्पद-मगमत्।।32।।

सिद्धि-वृद्धि तेज तपो निधि, मेघ गर्जना दिव्य ध्वनि,
गुणधारी ने समवशरण तज, पावापुर की राह चुनि।
सुंदर सरवर मध्य ध्यान कर, चारु शोभा प्राप्त करे,
अष्ट कर्म को नष्ट किया और, निराकार तन आप्त वरें।।32।।

सम्मदकरिवन-परिवृत सम्मेदगिरिन्द्र मस्तके विस्तीर्णे।
शेषा ये तीर्थकराः, कीर्तिभृतः प्रार्थितार्थ सिद्धि मवापन्।।33।।

महाकीर्ति धारी तीर्थंकर, बीस जिनेश्वर पावन धाम
दूर-दूर तक गज परिपूरित, तीर्थराज सम्मेद महान।
वनपर्वत जल पशु पक्षी से, हरा-भरा सुंदर अविराम,
मुक्ति का पुरुषार्थ सफल कर, सिद्धविराजे शाश्वत धाम।।33।।

शेषाणां केवलिना-मशेषमत वेदिगण भृतां साधूनां।
गिरितल विवरदरीसरि-दुरुवनतरु विटपिजलधि दहनशिखासु।।34।।

शेष केवली गणधर मुनिवर, गिरितल शिखर या मध्य प्रदेश,
गुफा नदी वन बिल शाखा या, अग्नि ज्वाला सिंधु विशेष।।34।।

मोक्षगतिहेतु-भूत-स्थानानि सुरेन्द्ररुन्द्र-भक्तिनुतानि।
मंगलभूतान्येता-न्यंगीकृत-धर्मकर्मणाम स्माकम्।।35।।

इन्द्रों द्वारा तीव्र भक्ति से, पूजे जाते अविकारी,
धर्म-कर्म मुक्ति के कारण, तीर्थ सदा मंगल कारी।।35।।

जिनपतयस्तत्-प्रतिमा-स्तदालयास्तन्निषद्यका स्थानानि।
ते ताश्च ते च तानि च, भवन्तु भव-घात-हेतवो भव्यानाम्।।36।।

जिन प्रतिमा जिन मंदिर हो या, जिन निर्वाण थान गुण वान,
उनकी स्तुति आराधन कर, सन्तति क्षय कर करे कल्याण।।36।।

सन्ध्यासु तिसृषु नित्यं, पठेद्यदि स्तोत्र-मेतदुत्तम-यशसाम्।
सर्वज्ञानां सार्वं, लघु लभते श्रुतधरेडितं पद-ममितम्।।37।।

उत्तम यश के धारी जिनवर, सर्व हितंकर दिव्य जिनेश,
त्रिसंध्या में स्तुति करते, मिले मुक्ति में शीघ्र प्रवेश।।37।।

नित्यं निःस्वेदत्वं, निर्मलता क्षीर-गौर-रुधिरत्वं च।
स्वाद्याकृति-संहनने, सौरूप्यं सौरभं च सौलक्ष्यम्।।38।।

जन्म काल के दश अतिशय हैं, स्वेद रहित ना करे निहार,
श्वेत रुधिर अतिशय सुंदर तन, सहस आठ लक्षण आधार।।38।।

अप्रमित-वीर्यता च, प्रिय-हित वादित्व-मन्यदमित-गुणस्य।
प्रथिता दश-विख्याता, स्वतिशय-धर्मा स्वयं-भुवो देहस्य।।39।।

हितमित प्रिय वाणी अति बल है, सहनन बज्र वृषभ नाराच,
संस्थान समचतुस्र हैं, सुरभित तन बालक जिनराज।।39।।

गव्यूति-शत-चतुष्ट य-सुभिक्षता-गगन-गमन-मप्राणिवधः।
भुक्त्युपसर्गाभाव-श्चतुरास्यत्वं च सर्व-विद्येश्वरता।।40।।

सौ योजन सुभिक्ष वर्तता, गगन गमन ना वध प्राणी,
भुक्ति ना उपसर्ग विहीना, चतुर्मुखी विद्या स्वामी।।40।।

अच्छायत्व-मपक्ष्म-स्पन्दश्च सम-प्रसिद्ध-नख-केशत्वम्।
स्वतिशय-गुणा भगवतो, घाति-क्षयजा भवन्ति तेऽपि दशैव।।41।।

नाछाया ना पलक झपकता, ना बढ़ता नाखून तन केश,
घाती क्षय दश अतिशय प्रगटा, केवल ज्ञानी नमुं विशेष।।41।।

सार्वार्ध-मागधीया, भाषा मैत्री च सर्व-जनता-विषया।
सर्वर्तु-फल-स्तबक-प्रवाल कुसुमोपशोभित तरु परिणामाः।।42।।

देव रचित चौदह अतिशय शुभ, अर्धमागधी भाषा है,
सब जन मैत्री भाव पनपता, षट ऋतु फल फूल आता है।।42।।

आदर्श तल-प्रतिमा, रत्नमयी जायते मही न मनोज्ञा।
विहरण-मन्वेत्यनिलः, परमानन्दश्च भवति सर्व-जनस्य।।43।।

रत्नमयी दर्पण समनिर्मल, भूमि चम-चम करती है
मन्द सुगन्धित वायु बहती, परमानन्द प्रगटती हैं।।43।।

मरुतोऽपि सुरभि-गन्ध-व्यामिश्रा योजनान्तरं भूभागम्।
व्युपशमित-धुलि-कण्टक-तृण-कीटक-शर्करोपलं प्रकुर्वन्ति।।44।।

एकयोजन तक सुरभित वायु, पृथ्वी तल पर चलती हैं,
धूली कंटक कीट उपल से, धरती निर्मल करती हैं।।44।।

तदनु स्तनितकुमारा, विद्युन्माला-विलास-हास-विभुषाः।
प्रकिरन्ति सुरभि-गन्धिं, गन्धोदक-वृष्टि-माज्ञया त्रिदशपतेः।।45।।

विद्युतमाला हास्य वेष धर, इंद्राज्ञा से आते हैं,
मेघरूप धर स्तनित भी, गंधोदक बरसातें हैं।।45।।

वर-पद्मराग-केसर-मतुल-सुख-स्पर्श-हेम-मय-दल-निचयम्।
पादन्यासे पद्म सप्त, पुरः पृष्ठतश्च सप्त भवन्ति।।46।।

तीर्थंकर के श्री विहार में, स्वर्ण कमल रचना रचते,
पद्मराग मणि जिसमे केशर, परस पत्र सुख मय लगते।
सात कमल आगे पीछे कुल, दो सौ पच्चीस कमल रचे,
प्रभु गमन की शोभा न्यारी, भक्ति में सब वाद्य बजे।।46।।

फलभार-नम्र-शालि-बीह्यादि-समस्त-सस्य-धृत-रोमाञ्चा।
परिहृषितेव च भूमि-स्त्रिभुवननाथस्य वैभवं पश्यन्ती।।47।।

त्रिभुवन नायक वैभव लखकर, धरती हर्ष विभोर हुई,
विविध फलों से भार युक्त हो, धान्य पूर्ण सौभाग्य मई।।47।।

शरदुदय-विमल-सलिलं, सर इव गगनं विराजते विगतमलम्।
जहति च दिशमिस्तमिरिकां, विगतरजः प्रभृति जिह्मताभावं सद्यः।।48।।

शरद ऋतु सरवर सम उज्ज्वल, गगन सुशोभित लगता है,
अंधकार तज निर्मल क्षिति धर, जग मन मोदित करता है।।48।।

एतेतेति त्वरितं ज्योति-र्व्यन्तर-दिवौकसा-ममृतभुजः।
कुलिशभृदाज्ञापनया, कुर्वन्त्यन्ये समन्ततो व्याह्वानम्।।49।।

इंद्र आज्ञा से ज्योतिष व्यन्तर, वैमानिक सब देव आये,
जल्दी आओ-आओ स्वर सुन, प्रभुविहार में चित लायें।।49।।

स्फुर-दरसहस्र-रुचिरं, विमल-महारत्न-किरण-निकल-परीतम्।
प्रहसित-किरण-सहस्र-द्युति मण्डल मग्रगामि धर्म सुचक्रम्।।50।।

दैदीप्यमान अर सहस किरण की, चम चम को फीका करता,
धर्म चक्र आगे चलता जो, प्रभु विहार महिमा कहता।।50।।

इत्यष्ट-मंगलं च, स्वादर्श-प्रभृति-भक्ति-राग-परीतैः।
उपकल्प्यन्ते त्रिदशै-रेतेऽपि-निरुपमातिशयाः।।51।।

भक्तिरूप में रंगे देव सब, निरूपम अतिशय दर्शाते,
दर्पण झारी अठ मंगल लें, आगे नत चलते जातें।।51।।

वैडूर्य-रुचिर-विटप-प्रवाल-मृदु-पल्लवोपशोभित-शाखः।
श्रीमानशोक-वृक्षो वर-मरकत-पत्र-गहन-बहलच्छायः।।52।।

वैडूर्य मणि की सुंदर शाखा, उपशाखा पत्ते कोपल,
हरित मणि पत्रों की छाया, तरु अशोक मनहर कोमल।।52।।

मन्दार-कुन्द-कुवलय-नीलोत्पल-कमल-मालती-बकुलाद्यैः।
समद-भ्रमर-परीतै-र्व्यामिश्रा पतति कुसुम-वृष्टि-र्नभसः।।53।।

भ्रमरों के गुंजार मदोन्मत्त, कुंद कुमुद मंदार बकुल,
नील श्वेत शुभ कमल मालती, नभ से वृष्टि पुष्प अमल।।53।।

कटक-कटि-सूत्र-कुण्डल-केयुर-प्रभृति-भूषितांगौ स्वंगौ।
यक्षौ कमल-दलाक्षौ, परि-निक्षिपतः सलील-चामर-युगलम्।।54।।

कड़ा मेखला करधनी कुंडल, स्वर्णाभूषण से सज्जित,
नयन कमल सुंदर विशाल दो, यक्ष चवर ढोरे शोभित।।54।।

आकस्मिक-मिव युगपद्-दिवसकर-सहस्त्र-मपगत-व्यवधानम्।
भामण्डल-मविभावित-रात्रिञ्दिव-भेद-तरामाभाति।।55।।

सहसा सहस सूर्य भी प्रगटे, तेज रहित हो जाते है,
रात दिवस का भेद मिटाकर, भामण्डल छा जाते हैं।।55।।

प्रबल-पवनाभिघात-प्रक्षुभित-समुद्र-घोष-मन्द्र-ध्वानम्।
दन्ध्वन्यते सुवीणा-वंशादि-सुवाद्य-दुन्दुभि स्तालसमम्।।56।।

वायु के आघात सिंधु के, शब्द समा गम्भीर ध्वनि,
वीणा बाँसुरी वाद्य ताल सम, दुंदुभि प्रातिहार्य सुनि।।56।।

त्रिभुवन-पतिता-लाञ्छन-मिन्दुत्रय-तुल्य-मुल-मुक्ता-जालम्।
छत्रत्रयं च सुबृहद्-वैडूर्य विक्लृप्त दण्ड मधिक मनोज्ञम्।।57।।

त्रिभुवन स्वामी तीन चन्द्र सम, अनुपम मौती जाल सहित,
नील मणि की वृहद दण्डयुक्त, तीन छत्र मस्तक शोभित।।57।।

ध्वनिरपि योजनमेकं, प्रजायते श्रोतृ-हृदयहारि-गम्भीरः।
ससलिल-जलधर-पटल-ध्वनितमिव प्रविततान्त-राशावलयम्।।58।।

कर्ण हृदय को हरने वाली, दिव्य ध्वनि योजन गुंजित,
जलधर पटल गर्जना के सम, दशो दिशा में हो व्यापित।।58।।

स्फुरितांशु-रत्न-दीधिति-परिविच्छुरिताऽमरेन्द्र-चापच्छायम्।
ध्रियते मृगेन्द्रवर्यैः स्फटिक शिला घटित सिंह विष्टर मतुलम्।।59।।

अंशुरत्न सम किरणों वाली, इंद्र धनुष सम कांति मान,
अनुपम फटिक शिला से निर्मित, सिंह रूप सिंहासन जान।।59।।

यस्येह चतुस्त्रिंशत्-प्रवर-गुणा प्रातिहार्य-लक्ष्यम्यश्चाष्टौ।
तस्मै नमो भगवते, त्रिभुवन-परमेश्वरार्हते गुण-महते।।60।।

चौतीस अतिशय चार चतुष्टय, प्रातिहार्य है आठ महान,
अर्हं त्रिभुवन के परमेश्वर, नमन करे गुण गरिमा गान।।60।।

क्षेपक-श्लोकाः

गत्वा क्षितेर्वियति पंचसहस्र दण्डान्,
सोपान-विंशतिसहस्र-विराजमाना।
रेजे सभा धनद यक्षकृता यदीया,
तस्मै नमस्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय।।1।।

धरती से धनु पाँच हजारा, ऊपर रहते गगन प्रवास,
बीस सहस सोपान श्रेष्ठ है, समवशरण सुंदर आवास।।
धनपति यक्ष रचित बहु शोभित, सभा मध्य प्रभु राज रहे,
नमन करूँ त्रिभुवन तीर्थंकर, भव्य जीव सरताज कहें।।1-62।।

सालोऽथ वेदिरथ वेदिरथोऽपि सालो,
वेदिश्च साल इह वेदिरथोऽपि सालः।
वेदिश्च भाति सदसि क्रमतो यदीये,
तस्मै नमस्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय।।2।।

समवशरण में धूलिशाल तट्, फिर वेदी की रचना है,
पुनः वेदी फिर स्वर्ण कोट तट पुनः वेदी संरचना है।
तृतीय रजत का कोट सुशोभित, फिर वेदी की रचना है।
स्फटिक तट पुनः वेदी है, त्रिभुवन नायक नमना है।।2-63।।

प्रासाद-चैत्य-निलयाः परिखात-वल्ली,
प्रोद्यानकेतु सुरवृक्ष गृहाङ् गणाश्च।
पीठत्रयं सदसि यस्य सदा विभाति,
तस्मै नम-स्त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय।।3।।

महल चैत्यालय खातिका, लता ध्वजा उद्यान,
कल्प तरु ग्रह पीठ त्रय, सभा शोभें भगवान।।3-64।।

माला-मृगेन्द्र-कमलाम्बर वैनतेय।
मातंगगो पतिरथांग मयूरहंसाः
यस्य ध्वजा विजयिनो भुवने विभान्ति,
तस्मै नम-स्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय।।4।।

गरुड़ हस्ति माला कमल, मोर हंस मृगराज,
वस्त्र बेल चकवा ध्वजा, सोहे सभा जिनराज।।4-65।।

निर्ग्रंथ-कल्प-वनिता-व्रतिका भ-भौम,
नागस्त्रियो भवन-भौम-भ-कल्पदेवाः।
कोष्ठस्थिता नृ-पशवोऽपिनमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय।।5।।

समवशरण की छटा निराली, बारह सभाएँ शोभ रही,
प्रथम मुनि कल्प वासी देवियाँ, आर्यिका मन मोह रही।
व्यन्तर ज्योतिष भवन वासी की, देवी देव विराज रहें,
कल्पदेव नरपशु भी नमते, त्रिभुवन स्वामी राज रहें।।5-66।।

भाषा-प्रभा-वलयविष्टर-पुष्पवृष्टिः,
पिण्डिद्रुम स्त्रिदश दुन्दुभि-चामराणि।

छत्रत्रयेण सहितानि लसन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय।।6।।

समवशरण में तरु अशोक, सिंहासन शोभित होता है,
तीन छत्र भामण्डल दुंदुभि, चौंसठ चवँर भी ढुरता है।
पुष्प वृष्टि और दिव्य ध्वनि से, छटा निराली हो जाती,
प्रातिहार्य अठ जिनवर सो हैं, नमो खुशाली छा जाती।।6-67।।

भृंगार-ताल-कलश-ध्वजसुप्रतीक-
श्वेतातपत्र-वरदर्पण-चामराणि।
प्रत्येक-मष्टशतकानि विभान्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय।।7।।

समवशरण में अष्ट सुमंगल, द्रव्य सजे हैं अति भारी,
पंखा कलशा ध्वजा साथियाँ, निर्मल दर्पण और झारी।
चौंसठ चँवर विनय दर्शाते, श्वेत छत्र त्रय मनहारी,
एक शतक अठ सभी शोभते, नमन करूँ जिन अघ हारी।।7-68।।

स्तंभ-प्रतोलि-निधि-मार्ग-तडाग-वापी-
क्रीडाद्रि-धूप-घट-तोरण-नाटय-शालाः।
स्तूपाश्च चैत्य-तरवो विलसन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय।।8।।

समवशरण की सुंदर रचना, गोपुर मार्ग जलाशय है,
सुंदर वापी क्रीड़ा पर्वत, मान स्तम्भ सदाशय है।
तोरण निधी घट धूप सुगन्धित, नाट्य शाला है अति विशाल,
चैत्य वृक्ष स्तुप सुहाने, वन्दन जिनवर करे निहाल।।8-69।।

सेनापति स्थपति-हर्म्यपति-द्विपाश्व,
स्त्री-चक्र-चर्म-मणि-काकिणिंका-पुरोघाः।
छत्रासि-दंडपतयः प्रणमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय।।9।।

चक्र छत्र असि दण्ड कांकिणी, चर्म अश्व गज पट रानी,
सेना गृह स्थपति पुरोहित, मणि रत्न चक्री स्वामी।
समवशरण में त्रिभुवन सम्मुख, आकर नित ही नमते हैं,
ऐसे जिनवर की महा पूजा, वंदना कर भव तरते हैं।।9-70।।

पद्मःकालो महाकालः सर्वरत्नश्च पांडुकः,
नैसर्पो माणवः शंखः पिंगलो निधयो नव।
एतेषां पतयः प्रणमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय।।10।।

पद्म काल महाकाल शंख अरु, सर्व रत्न पांडुक जानो,
नव निधियों नैसर्प पिंगला, माणव ये नव पहचानो।
चक्रवर्ती स्वामी इन सबका, फिर भी प्रभु चरणों झुकता,
त्रिभुवन स्वामी श्री जिनेन्द्र को, जो नमता भव से तिरता।।10-71।।

खवियघण घाइकम्मा, चउतीसातिसय विसेसपंचकल्लाणा।
अट्ठ वर पाडिहेरा, अरिहंता मंगला मज्झं।।11।।

दोहा— क्रुर घातियाँ नाश कर, चौंतीस अतिशय पाय,
कल्याणक प्रातिहार्य युत, जिन मंगल कर जाय।।11.72।।

इच्छामि भंते! णंदीसरभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। णंदीसरदीवम्मि, चउदिस विदिसासु अंजण-दधिमुह-रदिकर-पुरुणगवरेसु जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसुवि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय कप्पवासिय-त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेहिं ण्हाणेहिं, दिव्वेहिं गंधेहिं, दिव्वेहिं अक्खेहिं दिव्वेहिं पुप्फेहिं, दिव्वेहिं, चुण्णेहिं, दिव्वेहिं दीवेहिं, दिव्वेहिं धूवेहिं, दिव्वेहिं वासेहिं, आसाढ़-कात्तियफागुण-मासाणं अट्ठमिमाइं, काऊण जाव पुणिणमंति णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति। णंदीसरमहाकल्लाणपुज्जं करंति अहमवि इह संतो तत्थसंताइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि,

दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगह-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

हे! प्रभु नन्दीश्वर भक्ति कर, कायोत्सर्ग किया मैंने।
उन दोषों की आलोचन कर, इच्छा है तव पद सेनें।।

नन्दीश्वर की चार दिशाएँ और विदिशाएँ जानों,
अञ्जन गिरि दधिमुख रतिकर पर, जिनप्रतिमाएँ बहुमानों।।

भवन वासी व्यन्तर ज्योतिषी, कल्प वासी के देव कहे।
त्रिलोक वर्ति सब देव कुटुम्बी, दिव्य द्रव्य से सेव करें।।

दिव्य नीर गन्धाक्षत लेकर, दीप धूप भी दिव्य लिए।
दिव्य पुष्प नेवैद्य फलों से, त्रिमासों में पूज लिए।।

आषाढ़ कार्तिक फाल्गुन आठे से पूनम तक भक्ति करे,
अर्चन पूजन नमस्कार कर, नन्दीश्वर महापर्व धरें।।

भरत क्षेत्र में रहकर मैं भी, नन्दीश्वर प्रतिमा ध्याऊँ।
अर्चन पूजन वन्दन करके, दुख कर्मन क्षय कर जाऊँ।।

रत्नत्रय की प्राप्ति होवें, सुगति में हो गमन मेरा।
मरण समाधि जिन गुण प्राप्ति, यही भावना भाव भरा।।

गुरू वंदना

पुष्पदन्त गुरूदेव को, वन्दन बारम्बार।
महासन्त गुणगान कर, करूँ आत्म उद्धार॥

मंगल मूरत दिव्य स्वरूपी, भव्यों के मनहारी हैं।
राग तजें वैराग भजें, गुरु पुष्पदंत उपकारी हैं॥
जीवन को जीवन्त बनाने, मोक्ष मार्ग स्वीकार किया।
महातपस्वी ज्ञान मनीषी, मम जीवन उद्धार किया॥

जय पुष्पदंत गुरु सन्त आप, जय धर्म मार्ग के सूर्य आप।
जय पर उपकारी दिव्य रूप, जय करुणाधारी गुण अनूप॥1॥

जय श्रमण संस्कृति के नेता, जय त्याग रूप इन्द्रिय जेता।
जय रत्नत्रय धारी महान, जय धर्म धुरंधर ज्ञानवान॥2॥

जय जय जय जय गुरु पुष्पदंत, जय हो जय हो जय जैन सन्त।
जय जय जय जय गुरु पुष्पदंत, जय हो जय हो जय जैन सन्त।3॥

है कोमल पितु मथुरा माता, पर उनसे ना तेरा नाता।
जब उमर हुई छब्बीस साल, मुनि दीक्षा ले निज को सँभाल॥4॥

गुरु विमल सिन्धु ने दी दीक्षा, अपनी क्षमता से ली शिक्षा॥
फिर नगर नगर विहार किया, जैनागम को विस्तार दिया।5॥

गुरु जय हो जय हो जय तेरी, गुरु मेटो भव भव की फेरी॥
गुरु जय हो जय हो जय तेरी, गुरु मेटो भव भव की फेरी॥6॥

गुरु भारत भर में भ्रमण किया, सबने धर्मामृत श्रवण किया।
गुरु भवोदधि के तारक हो, गुरु भक्तों के उद्धारक हो॥7॥

गुरु दीर्घ तपस्वी तीरथ हो, तप त्याग की अद्‌भुत मूरत हो।
गुरु भ्रम के जाल हटाते हो, गुरु मोक्ष मार्ग प्रगटाते हो॥8॥

गुरु पुष्पदंत की जय बोलो, जय बोलो हिय के पट खोलो।
गुरु पुष्पदंत की जय बोलो, जय बोलो हिय के पट खोलो॥9॥

तुम पंच महाव्रत धारी हो, तुम क्षमा शील अवतारी हो॥
तुम संघर्षों में हँसते हो, तुम उपसर्गों को सहते हो॥10॥

तुम निस्पृह योगी ज्ञाता हो, तुम अपने भाग्य विधाता हो॥
तुम अद्‌भुत हो तुम अनुपम हो, तुम मम जीवन के दर्पण हो॥11॥

जय हो जय हो जय गुणवन्त, जय हो जय हो जय निर्ग्रन्थ॥
जय हो जय हो जय गुणवन्त, जय हो जय हो जय निर्ग्रन्थ॥12॥

जो भव्य निकट आ भक्ति करे, वह दिव्य ज्योति से शक्ति वरे।
मैं हूँ तेरा छोटा बालक, गुरु आप कृपा सिन्धु पालक॥13॥

गुरु तेरी पूजा करता हूँ, अपने दुर्गुण को तजता हूँ।
गुरु वरद हस्त सिरपर रख दो, मुझको निज संयम से भर दो॥14॥

जय संयमधारी ज्ञानवन्त, जय वर्तमान के श्रेष्ठ सन्त।
जय संयमधारी ज्ञानवन्त, जय वर्तमान के श्रेष्ठ सन्त॥15॥

मैं अर्घ चढ़ा विनती करता, तेरे पथ चलकर ही तरता।
मैं शक्ति हीन अनुरागी हूँ, तुम शक्तिवान वैरागी हो॥16॥

मम अन्तर मन प्रक्षाल करो, मम जीवन को खुशहाल करो।
गुरु जयकारा तेरी करता, 'सौरभ' सुरभित हो भव तरता॥17॥

जय कृपा निधाना दिव्य संत, जय जय गुरुवर श्री पुष्पदंत॥
जय कृपा निधान दिव्य संत, जय जय गुरुवर श्री पुष्पदंत॥18॥

दोहा

महाश्रमण महावीर के, प्रतिनिधी हो आप।
'सौरभ सागर' नित नमें, हरने जग संताप॥

चौबीस तीर्थंकर स्तुति

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमतिनाथ स्वामी गुणखान।
पद्म सुपारस चन्दा प्रभु जी, पुष्पदन्त जिन कर लूँ ध्यान॥
हे शीतल प्रभु शीतल करदो, श्रेयनाथ जिन हृदय विशाल।
वासुपूज्य पद बाल ब्रह्म हैं, विमल अनन्त धरम जयमाल॥
शान्ति कुन्थु अर मल्लि जिनेश्वर, मुनिसुव्रत व्रत पाऊँगा।
नमिनाथ नम नेमि शरण पा, पारस वीर को ध्याऊँगा॥
चौबीसों जिनराज हमारे, आज पुकारूँ करुणा धार।
अत्र पधारो हृदय विराजो, कर्म खपाओ हे अविकार॥
तीर्थंकर हे धर्म शिरोमणि, कर्म नाश भव पार करो।
भक्ति भाव से स्तुति करता, मम विनती स्वीकार करो॥

दोहा

श्री आदिनाथ जी

आदिनाथ प्रथमेश जिन, धर्म कर्म दातार।
भव वारिधी से पार कर, मेटो मम संसार॥1॥

श्री अजितनाथ जी

धर्मधुरा धारी प्रभु, धर्म बढ़ावें रोज।
अजितनाथ भगवान के, बन्दूँ चरण सरोज॥2॥

श्री संभवनाथ जी

संभव सम भव अन्त हो, पाऊँ सिद्ध स्वभाव।
भावों में समभाव हो, तजूँ विकारी भाव॥3॥

श्री अभिनन्दननाथ जी

अभिनन्दन वन्दन करूँ, क्रन्दन कर्म नशाय।
जग बन्धन को तोड़कर, सिद्धालय को पाय॥4॥

श्री सुमतिनाथ जी

मिथ्यावाद को दूर कर, स्याद्वाद प्रगटाय।
दुर्बुद्धि दुर्ध्यान तज, सुमतिनाथ शिर नाय॥5॥

श्री पद्मप्रभु जी

पद्मासन बैठे प्रभू, आतम पद्म खिलाय।
पद्म खिले निज ध्यान का, पद्म प्रभु सिर नाय॥6॥

श्री सुपारसनाथ जी

वीतराग निज ज्ञान में, झलके तीनों लोक।
तत्व प्रकाशक महामुनि, चरण सुपारस धोक॥7॥

श्री चन्द्रप्रभु जी

अखिलेश्वर हे महाव्रती, तीर्थ प्रवर्तक आप।
धवल वर्ण तन आत्मा, चन्द्र प्रभु निष्पाप॥8॥

श्री पुष्पदंत जी

भव भंजक भगवान हैं, पुष्पदंत शुभ नाम।
मगर चिह्न तन श्वेत है, शत शत करूँ प्रणाम॥9॥

श्री शीतलनाथ जी

धर्मामृत का दान दे, शीतल शिवपद पाय।
मम आतम शीतल करे, छोड़े विषय कषाय॥10॥

श्री श्रेयांशनाथ जी

जय जय श्रेयांशम तव गुण पासं, कर्म विनाशं भक्ति करम्।
पावन पद बन्दों जँय जिन चन्दों, कृपा करिंदो शान्ति प्रदम्॥11॥

श्री वासुपूज्य जी

पाँचों कल्याणक महा, चम्पापुर में पाय।
बाल ब्रह्मचारी प्रथम, वासुपूज्य जिनराय॥12॥

श्री विमलनाथ जी

बाहर भीतर स्वच्छता, विमल अमल गुणवन्त।
अर्घ चढ़ाकर पूजता, पाने पद अरहन्त॥13॥

श्री अनन्तनाथ जी

सुख अनन्त पाया प्रभु, कर कर कर्मन् अन्त।
अर्घ चढ़ा वन्दन करूँ, अनन्तनाथ भँगवन्त॥14॥

श्री धर्मनाथ जी

ध्वनि सुनि ध्रुवधाम की, धैर्य धर्म प्रगटाय।
ध्याता बन निज ध्येय को, धर्मनाथ सम ध्याय॥15॥

श्री शान्तिनाथ जी

जय त्रिभुवन नायक आतम ज्ञायक, कर्म विनाशक शान्ति नमो।
जय शिवपुरवासी ज्ञान प्रकाशी, धर्म विकासी शान्ति नमों॥16॥

श्री कुन्थुनाथ जी

कर्म जहर निज आत्मा, मरण देय भटकाय।
भक्ति कुन्थुनाथ की, सर्व जहर विनशाय॥17॥

श्री अरहनाथ जी

दर्पण में मुख रूप लख, भूला आत्म स्वरूप।
अरहनाथ सर्व दर्प हर, पाया चिन्मय रूप॥18॥

श्री मल्लिनाथ जी

हे लेश्या तीता भव्या मीता, परम पुनीता मल्लि जिनेश।
जय आत्म विहारी बाल ब्रह्मचारी, आरती उतारी भक्ति विशेष॥19॥

श्री मुनिसुव्रतनाथ जी

शत इन्द्रों ने भक्ति कर, नाशा भव भटकाव।
मुनिसुव्रत की अर्चना, देवे निज स्वभाव॥20॥

श्री नमिनाथ जी

नमिनाथ नमता रहूँ, नम्र भाव मन धार।
अहंकार सब मेंट कर, धारूँ शुद्ध विचार॥21॥

श्री नेमीनाथ जी

पशु बन्धन को देखकर, धार लिया वैराग्य।
सर्वदर्शी नेमी प्रभु, नमन जगावें भाग्य॥22॥

श्री पार्श्वनाथ जी

क्षायिक नव लब्धि महा, योग निरोध कर पाय।
पार्श्व प्रभु की वन्दना, पाऊँ निज स्वभाव॥23॥

श्री महावीर स्वामी जी

शासन नायक वीर जिन, अनेकान्त सरताज।
समवशरण सन्देश दे, पाय मुक्ति राज॥24॥

आदि जिनेश्वर जग हितकारी, अजित नाथ जित कर्म विकारी।
संभव भव का नाश किया है, अभिनन्दन जग जान लिया है॥25॥

सुमतिनाथ सन्मार्ग प्रदाता, पद्म प्रभु जी जग विख्याता।
नाथ सुपारस जय हो तेरी, चन्द्रप्रभु काटों भव फेरी॥26॥

पुष्पदन्त श्री जिनवर नामा, शीतल शीतलता ध्रुव धामा।
श्रेयनाथ गुण दया निधाना, वासुपूज्य पूजित अविरामा॥27॥

विमलनाथ निर्मलता धारी, है अनन्त अक्षय सुखकारी।
धर्मनाथ जिन धर्म बढ़ावें, शान्तिनाथ मन शान्त करावें॥28॥

कुन्थुनाथ जी काम विजेता, अरहनाथ त्रिपद के नेता।
मल्लिनाथ सब शल्य मिटावें, मुनिसुव्रत व्रत में तिष्ठावें॥29॥

नमिनाथ को नमन हमारी, नेमिनाथ दुख संकटहारी।
पारसनाथ सदा ही ध्याऊँ, महावीर पद शीश नवाऊँ॥30॥

चौबीसों के चरण में, वन्दन बारम्बार।
"सौरभ सागर" नित नमें, भक्तिभाव उरधार॥31॥

सम्मेदशिखर वंदना

दोहा– कोड़ा कोड़ी मुनिवरा, कर्म नशावें आन।
भक्ति से वंदन करूँ, करे कर्म की हान॥
तीर्थराज में भक्त जन, भगवन् को हे ध्याय।
जिन प्रतिमा जितनी यहाँ, हाथ जोड़ सिर नाय॥

कर्म नाश की उज्ज्वल भूमि, तीर्थराज सम्मेद शिखर।
श्रद्धालु के पाप हरे जो, करे वंदना गिरी ऊपर॥1॥
हरे भरे वृक्षों से शोभित, पर्वत का कण कण पावन।
आह्वानन स्थापन करता, सिद्ध प्रभु हिय धर धारण॥2॥

संत अनंतानंत यहाँ से, निराकार पद को पाए।
भाव सहित मैं करूँ अर्चना, अष्ट द्रव्य कर में लाये ॥3॥

तीर्थंकर श्री बीस जिनेश्वर, सारे कर्म नशाये हैं।
हृदय कमल में आप विराजो, भाव संजोकर लाये है॥4॥

तीर्थराज सम्मेद शिखर की, जय जय कर वंदन करता।
तीरथ की पावन रज मस्तक, लगते ही क्रंदन हरता॥5॥

टोंक टोंक पर तीर्थंकर के, चरण नमें सुखकारी है।
पग पग ऊपर चढ़ता जाऊँ, जिनवर सब दुखहारी हैं॥6॥

हरियाली की टोप लगाए, पर्वत मनहर सुन्दर है।
प्रथम कूट का नाम "सिद्धवर", अजितनाथ तीर्थंकर है॥7॥

"धवल कूट" से संभवनाथा, अभिनंदन आनंदम है।
सुमतिनाथ "अविचल" सुखकारी बुद्धि सुवासित चन्दन है॥8॥

"मोहन कूट" से पद्म प्रभु जी, आतम पद्म खिलायें है।
नाथ सुपारस कूट "प्रभास" से, सिद्धालय पद पायें है॥9॥

चंद्र प्रभु चंदा सम सोहे, "ललित कूट'' है गिरी विशाल।
पुष्पदंत के चरण नमे जो, "सुप्रभ कूट'' में करे निहाल॥10॥

मंद सुगंध वयारि के संघ, अर्घ चढ़ा बढ़ता जाऊँ।
"विद्युत् कूट" में शीतल प्रभु की, वंदन कर मैं हर्षाऊँ॥11॥

जैन धर्म के कुलाचार का, "संकुल कूट" में नीयम हो।
श्री श्रेयांश का दर्शन प्यारा, त्याग धर्म मय जीवन हो॥12॥

वीर बलि "सुवीर कूट" तक, विमल नाथ को नमता चल।
कूट "स्वयंभू" नाथ अनन्ता, कर्म नशाने भजता चल॥13॥

धर्मनाथ का कूट "सुदत्ता", कूट "कुंदप्रभ" शान्ति जिनेश।
कुन्थुनाथ का कूट "ज्ञानधर", वंदन कर तज राग द्वेष॥14॥

अरहनाथ अरिदमन करावे, "नाटक कूट" में दर्शन हो।
"सम्बल कूट" का आलम्बन हो, मल्लि चरण स्पर्शन हो॥15॥

कर्म निर्जरा वंदन से कुछ, हम भक्तो का हो जावे।
"निर्जरकूट" में मुनिसुब्रत के, व्रत से कर्म विनश जावे॥16॥

तीनलोक में शत्रु ना हो, कूट "मित्रधर" आ जाऊँ।
नमिनाथ की करूँ वन्दना, तीर्थंकर पद को पाऊँ॥17॥

पार्श्वनाथ पर्वत के मालिक, "स्वर्णभद्र" विराज रहे।
चतुर्गति के बंधन काटो, जगती का ना काज रहे॥18॥

बीसों तीर्थंकर हितकर हैं, नर देवों से वन्दित हैं।
देव देवियाँ हरपल भ्रमते, रक्षित पर्वत शोभित है॥19॥

आदिनाथ और वासुपूज्य का, टोंक बना मनहारी है।
नेमिनाथ महावीर प्रभु को, वंदन यहाँ हमारी है॥20॥

पर्वत पर पावन संतो के, शुभ परमाणु फैले हैं।
रोग-शोक व्याधि बाधा के, दूर रहे सब रेलें हैं॥21॥

नियम लेकर भाव सहित जो, वंदन पूजन करता है।
नरक पशुगति का बंधन तो, इस भव में ही छँटता है॥22॥

घर से जब यात्रा को निकलें, रात्रि भोजन व्यसन तजे।
प्रासुक जल मर्यादित भोजन, सुबह शाम ही ग्रहण करें॥23॥

णमोकार या सिद्ध प्रभु की, सोते उठते जाप करें।
शुद्ध वसन तन मन निर्मल कर, यात्रा से सब पाप हरें॥24॥

अंतिम टोंक की वंदना करके, क्षमायाचना नित्य करें।
फिर से जब तक दर ना आऊँ, एक नियम को ग्रहण करें॥25॥

ऐसे भावों की शुभ यात्रा, नरक पशु गति मुक्त करे।
तन मन घर परिवार मित्र की, सुख शांति अभिव्यक्त करे॥26॥

तीर्थराज सम्मेद शिखर तो, जैनों की रजधानी है।
भारत भर के जैनो का यह, तीर्थ महा कल्याणी है॥27॥

जिन मंदिर से भरा क्षेत्र यह, ऊपर नीचे सोह रहा।
पूजा भक्ति स्वाध्याय व्रत, मुनि दर्शन मन मोह रहा॥28॥

चारों ओर से जैनी बंधु, यात्रा करने आते हैं।
ध्वजा चढ़ाते छत्र चढ़ाते, अर्घ चढ़ा हर्षाते हैं॥29॥

मंत्र जाप पूजा से गुंजित, पर्वत मंगलकारी है।
मनोकामना पूरण होती, श्रद्धाफल अति भारी है॥30॥

एक अरब बारह कोटि फल, उपवासों का मिलता है।
चार कोटि प्रोषध का फल भी, सर्व कष्ट को हरता है॥31॥

सिद्ध क्षेत्र निर्वाण भूमि या, शाश्वत धाम कहाता है।
तीर्थराज सम्मेद शिखर से, जैनों का ही नाता है॥32॥

इसकी महिमा गरिमा को हम, निज भक्ति से बढ़ायेंगे।
पावनता नैतिकता मन धर, तीरथ स्वच्छ बनायेंगे॥33॥

बाहर निर्मल भीतर निर्मल, निर्मल शाश्वत धाम है।
तीर्थराज सम्मेद शिखर को, बारम्बार प्रणाम है॥34॥

दोहा

तीर्थराज सम्मेद शिखर, वंदु मन वच काय।
'सौरभ सागर' भक्ति कर, निश्चय शिव सुख पाय॥

• • •

देव शास्त्र गुरु तीर्थवन्दना

दोहा- परमेष्ठी श्रुत बीस जिन, तीस चौबीसी ध्याय।
अकृत्रिम जिनराज भज, सिद्ध भूमि सिर नाय।।

पंचपरम गुरु परमेष्ठी हैं, पूज्य पुरुष अरिहंत मुनि।
सिद्ध निरामय निराकार हैं, अष्ट कर्म के कष्ट हनि।।1।।

आचारज उवज्झाय साधुगण, ज्ञानध्यान तप लीनयति।
णमोकार नित जपकर करता, चरण वंदना जैनमति।।2।।

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पद्म सुपार्श्व प्रभो
चन्द्र पुष्प शीतल श्रेयांश पद, वासु विमलानन्त नमो।।3।।

धर्म शान्ति कुन्थु अरनाथा, मल्लि मुनिसुव्रत नमि जपूं।
नेमी पारस महावीर जी, वर्तमान चौबीसी भंजू।।4।।

तीर्थराज सम्मेद शिखर जी, अष्टापद पावा गिरनार।
चम्पापुर सह ढाई द्वीप की, मोक्ष भूमि बन्दूँ शतवार।।5।।

सीमंधर से अजितवीर्य तक, विद्यमान श्री बीस जिनेश।
क्षेत्र विदेह में देह रहित हो, हरते सारे कर्म क्लेश।।6।।

आठ कोटि अरुँ छप्पन लक्षा, सत्तावन हज्जार कहें।
चार शतक इक्यासी प्रतिमा, नमन उन्हें शतवार करें।।7।।

जिनप्रतिमा अकृत्रिम जग में, दिव्य रूप है वृहद विशाल।
ऊर्ध्व अधो अरुँ मध्य लोक के, जिन प्रतिमा बन्दूँ त्रयकाल।।8।।

ऐरावत और भरत क्षेत्र के, तीर्थंकर गुणगान करूँ।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीस चौबीसी ध्यान धरूँ।।9।।

प्रभु पूजन दर्शन वंदन से, निद्धत निकाचित कर्म कटें।
अनुपम आत्मिक अव्यय सुख का, सूरज निज आतम प्रगटें॥10॥

दिव्य ध्वनि की निर्मल वाणी, माँ जिनवाणी कहलाती।
दिव्य ज्ञान दे अन्तर्मन की, कल्मषता सब धो जाती॥11॥

परमेष्ठी जिनवाणी माता, क्षेत्र विदेह के बीस जिनेश।
सिद्ध भूमि अकृत्रिम प्रतिमा, तीस चौबीसी के तीर्थेश॥12॥

देव शास्त्र गुरु तीरथ भूमि, तीर्थंकर को सदा नमूँ।
अर्घावली चरणों में देकर, शुद्धातम को सदा भजूँ॥13॥

दोहा- कर्म रहित जिनदेव की, भक्ति करे कल्याण।
"सौरभसागर" नित नमे, पाने शाश्वत धाम॥

श्री मंशापूर्ण महावीर स्तुति

हे वीर प्रभो महावीर प्रभो, तेरे चरणों में आया हूँ।
सब पाप ताप संताप हरो, मैं अर्चन कर हर्षाया हूँ॥
आओ आओ प्रभु एक बार, मेरे मन का प्रक्षाल करों।
हे महाश्रमण हे वर्धमान, तुम सन्मति दे जंजाल हरों॥
प्रभु मंशापूरण करते हो, प्रभु संशय तिमिर भी हरते हों।
मैं मन से पूजा तेरी करूँ, सुख सिन्धु से भी भरते हों॥1॥

श्रद्धा का जल कर में लेकर, भक्ति का चन्दन लाया।
अक्षत कुसुम चरूवर पावन, दीप धूप वन्दन भाया॥
सिद्ध शिला फल चाह लिये प्रभु, आठों द्रव्य चढ़ाऊँगा।
श्री मंशापूरण महावीर की, पूजा कर सुख पाऊँगा॥2॥

महामना हे महामुनि हे, महायोगी महाज्ञानी हो।
महाशक्ति हे महाज्योति हे, महाप्रभु महादानी हो॥
महाव्रतों को महाभाव से, महावीर ने धार लिया।
मंशापूरण महावीर बन, मानव का उद्धार किया॥3॥

भावों की शुभ निर्मलता ही, भव बन्धन को नित काटें।
निज स्वभाव में रम जा चेतन, खोल राग की सब गाठें॥
भाव-साधना-भाव-समाधी, भाव स्वभाव मे लीन रहें।
द्रव्य भाव द्वय अर्घ्य समर्पित, श्रद्धालय में लीन रहें॥4॥

अन्तिम गर्भ हो चरमोत्तम तन, महावीर-सा बन जाऊँ।
महाअर्घ चरणाम्बुज देकर, वज्र कर्म सब विनशाऊँ॥
तीर्थंकर का गर्भाराधन, गर्भ दोष का नाश करे।
त्रय ज्ञानी समकित तीर्थंकर, धर्मात्मक उल्लास भरे॥5॥

जन्म काल का अतिशय सुखकर, तीर्थंकर ही पाते हैं।
कल्याणक शुभ जन्म मनाकर, नर देवा हर्षाते हैं।।
जन्म मरण की भ्रमण शृंखला, तब पूजा से घट जाये।
अर्घ समर्पित तव चरणों में, मोह तिमिर सब छट जाये।।6।।

वर्धमान अतिवीर वीर जिन, महावीर शुभ नाम कहो।
सद्बुद्धि सन्मार्ग प्रदाता, सन्मति का गुणगान अहो।।
राग-द्वेष मद लोभ मोह सब, नामोच्चारण दूर करें।
अर्घ समर्पित मंशापूरण, धर्मभाव भरपूर भरे।।7।।

दीर्घ साधना कर्म निर्जरा, धर्म ध्यान से नित साधें।
तन मन की इच्छा ज्वाला को, शुक्ल ध्यान जल से नाशें।।
महावीर की वीतरागता, निर्मल-निच्छल-मनहारी।
पूर्णअर्घ चरणों मे अर्पित, वर्धमान दीक्षाधारी।।8।।

केवलज्ञानी अतिशय धारी, चार घातियाँ नाश किया।
प्रातिहार्य आठों सज्जित है, समवशरण प्रवास किया।।
विपुलाचल वैभार गिरी या, पुण्यवान जग जीव जहाँ।
दर्शन पूजन व्रत उपदेशा, पाकर तिरते जीव यहाँ।।9।।

दोहा– अल्पज्ञान लब्ध्यक्षरा, पूरण केवल ज्ञान।
महावीर की देशना, करें आत्म कल्याण।।10।।

भू भीतर देवों द्वारा ही, पूजा सेवा नित होती।
वर्षों तक ना पुण्योदय था, दर्शन फिर कैसे होती।।
सात नवम्बर भू से प्रगटे, मंशापूरण श्री भगवान।
अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति गाऊँ, वर्धमान महावीर महान।।11।।

भक्ति में तन्मय हो करके, चिन्मय मुरत पाया है।
सिद्ध निरामय निर्मल निश्चल, अविनाशी सुख पाया है।।

हो विरक्त जग उलझन से प्रभु, तेरे दर पर आऊँगा।
आत्म ओज का उद्‌भव होवे, महावीर गुण गाऊँगा।।12।।

सुख राशि गुणदाता जिनवर, दया सिन्धू महावीर प्रभो।
विघ्न हरण हे मंशापूरण, वर्धमान अतिवीर विभो।।
परमेश्वर हो, प्रतिपालक हो, जिन शासन के नायक हो।।
महा-अर्घ्य चरणों मे अर्पित, सौरभ सागर ज्ञायक हो।।13।।

दोहा

महावीर जिनराज का, अद्‌भुत है दरबार।
भक्ति से पूजा करूँ, नमन करूँ शतबार।।14।।

जय वीरा बन्दो महान, जय स्याद्‌वाद सूरज जहान।
जय कर्म विजेता आत्म धीर, जय निजानंद सब हरत पीर।।15।।

जय पंच नाम धारी कहाय, जय वर्धमान गुण गण बढ़ाय।
जय न्यहवन समय में श्वास लीन, जय वीर नाम सुरेन्द्र दीन।।16।।

दो मुनि ने देखा बाल रूप, फिर नाम रखा सन्मति अनूप।
गजराज उपद्रव करता आय, अतिवीर नाम जय करके पाय।।17।।

देवों ने बल का यश गाया, संगम तत्क्षण धरती आया।
खेले बालक जिस वृक्ष पास, विकराल धरा था रूप नाग।।18।।

भय से भागे सारे बालक, पर वर्धमान सबके पालक।
नागों पर मुष्ठी प्रहार किया, तत्क्षण संगम मनुहार किया।।19।।

तुम अद्‌भुत बलशाली महान, गुणशाली धरा महावीर नाम।
प्रभु नाम में शक्ति है अनन्त, जो जपता कटते कर्म बन्ध।।20।।

भई तीस वर्ष की उम्र आप, छोड़े जग झंझट राज पाठ।
तप बारह वर्ष महा कीना, सब घाति कर्म भगा दीना।।21।।

प्रभु समवशरण रचना महान, दर्शन पा भक्त करे प्रणाम।
दिन पर दिन छयासठ बीते, प्रभु वाणी बिन रीते रीते।।22।।

तब इन्द्रभूति गौतम आया, प्रभुदर्श किया चित उमगाया।
पहले ही दर्शन का प्रभाव, सब वस्त्र तजा पाया स्वभाव।।23।।

पाँच शतक थे शिष्य आय, केशलोंच करी दीक्षा सुपाय।
श्री महावीर वाणी थी खिरी, सब भव्य जनों पर है बिखरी।।24।।

चहुँ ओर धरम विस्तार हुआ, प्रभु सत्य अहिंसा प्रचार हुआ।
प्रभु मूरत गढ़ पूजा करते, निधत्त निकाचित क्षय करते।।25।।

धीरे धीरे बहुकाल गया, घट बढ़ता धर्म सँभाल लिया।
आतंकी ने मन्दिर तोड़ा, प्रभु ने भू से नाता जोड़ा।।26।।

वर्षों पर वर्षों बीत गए, प्रभु धरती के ही मीत हुए।
सात नवम्बर शुभ दिन आया, झाड़ली में प्रभु दर्श दिखाया।।27।।

भक्तों ने प्रभु दर्शन कीना, खुशियों से जयकारा कीना।
तभी भक्त गुरु सम्मुख आए, महावीर तस्वीर दिखाए।।28।।

सौरभ सागर ने रूप लखा, कुछ अतिशय ऐसा भाव जगा।
मंशापूरण जाप किया है, प्रतिमा का सानिध्य लिया है।।29।।

गुरु भक्तों ने साथ निभाया, प्रतिमा गाजियाबाद है लाया।
पुण्य उदय भक्तों का आया, गंगानगर में दर्श दिखाया।।30।।

प्रतिमा से आवरण हटाया, इन्द्रों ने बरसात कराया।
सन अठारह माह जुलाई, रथ यात्रा से करी विदायी।।31।।

धूम-धाम से चली सवारी, प्रभु विहार की शोभा न्यारी।।
गंगनहर के एक किनारे, मंशापूरण वीर पधारे।।32।।

दिव्य शान्त है मूरत तेरी, दर्शन से मिटती भव फेरी।
जो भी मन से ध्यान लगाता, मंशापूर्ण फल मिल जाता।।33।।

भक्ति भाव से ज्योति जलावे, सब संकट को दूर भगावे।
महावीर जयमाला गावे, सुख शान्ति समृद्धि पावे॥34॥

धत्ता– **जय जय महावीरा भवदधि तीरा, गुण गंभीरा अतिवीरा।**
मम धर्म बढ़ावे जिनपद पावें, सौरभ सागर नत धीरा॥35॥

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ठें ऊँ मंशापूर्ण महावीर जिनेन्द्राय सुख-सौभाग्यं कुरु कुरु स्वाहा।

माँ जिनवाणी वन्दना

समवशरण में तीर्थंकर की, दिव्य ध्वनि तन से खिरती।
द्वादशांग-मय गणधर द्वारा, शब्द अर्थ हो नित कहती।।
परम ब्रह्म और शब्द ब्रह्म का, मेल जिनागम कहलाता।
संशय-विभ्रम नाशन हेतु, अध्ययन आराधन भाता।।1।।

ऋषभदेव महावीर की वाणी, भुवन व्यापिनी मंगलकार।
वृषभसेन से गौतम स्वामी, अर्थ बता करते उद्धार।।
पूर्वापर अविरुद्ध वाग्मय, शब्द रूप संबोध करें।
सम्यग् दर्शन ज्ञान-चरित दें, भव्य जीव का शोध करें।।2।।

जन्म दायिनी माता जग में, जन जीवन सिखलाती है।
माँ जिनवाणी जन जीवन से, मुक्ति बोध कराती है।।
है संसार असार विषय सुख, ऐसा ज्ञान प्रदान करों।
सरस्वती माँ सरसमति दे, जीवन का कल्याण करों।।3।।

भव्य शरण्या भक्त वत्सला, ज्योतिर्मय जिन मुख वासी।
अनेकांत संभाषिणी माता, नय प्रमाण मय विश्वासी।।
ग्यारह अंगम्-चौदह पूर्वम्, द्वादशांग मय शास्त्र नमों।
सत्याभाषी मिथ्यानासी, केवल ज्ञानी पात्र नमों।।4।।

महावीर की दिव्य ध्वनि तो, ग्यारह गणधर ने झेली।
बासठ वर्षों तक क्रम केवली, अनुबद्ध हो कर फैली।।
पंच केवली श्रुत में आकर, द्वादशांग विस्तार करें।
दशम पूर्व के ग्यारह मुनिवर, सर्व पाप निस्तार करें।।5।।

एक शतक तेईस वर्षों तक, ग्यारह अंग धरे मुनिराज।
अठ नव दश अंगों के धारी, तपसी थे चारों ऋषिराज॥
छः सौ तिरासी वर्षों तक, निर्ग्रन्थ महासंघ बना रहा।
असंख्यात निर्ग्रन्थ श्रमण से, जैन धर्म भी जमा रहा॥6॥

सिद्धान्तों की शुद्ध शृंखला, मुनियों से चलती आई।
ऋषभ देव से महावीर तक, तत्व द्रव्य कहती आई॥
द्वादशांगमय माँ जिनवाणी, ज्ञान सदा सुख दायी है।
"आचारांग" या "सूत्र कृतांगम्", धर्म भाव विकसायी है॥7॥

जीव राशि किस-किस योनि में, "स्थानांग" बताता है।
"समवायांग" या "व्याख्या प्रज्ञप्ति", समाधान कर जाता है॥
मुनिराजों की "ज्ञातृ कथा" जो, श्रद्धाभाव जगाते हैं।
"उपासकाध्यनांग" सदा ही, त्याग भाव बढ़ाते हैं॥8॥

"अंतकृत" दश "अनुत्तरं" अरुँ, "प्रश्न व्याकरण" का सुज्ञान।
"सूत्र विपाक" भी श्री जिनवाणी, "दृष्टि वाद" है पूर्ण विज्ञान॥
एक सौ बारह कोटि से भी, लाख तिरासी ज्यादा है।
अट्ठावन हज्जार पदों से, पाँच अधिक पद गाथा है॥9॥

एक अंग के धारी मुनिवर अर्हत्बली शुभ नाम कहो।
महाज्ञान धारी "धरसेना", मंत्र ज्ञान से युक्त अहो॥
दो शिष्यों को पास बुलाकर, मंत्र सिद्ध था करा दिया।
"महाकम्म पयडि पाहुड" का, दिव्य पाठ भी पढ़ा दिया॥10॥

महामनस्वी पुष्पदंत ने, "महामंत्र णमोकार" लिखा।
एक सौ सत्तहतर सूत्र ज्ञान में, जीव द्रव्य संसार दिखा॥
"पुष्पदन्त" अरुँ "भूतबली" ने, आगम का रस पिला दिया।
षट्खण्डागम् ग्रन्थ प्रगट कर, जैन धर्म को खिला दिया॥11॥

"षट्खण्डागम्" जैन धर्म का, मूल ग्रन्थ और मंत्र कहा।
जैनागम का सूर्योदय था, "श्रुत पंचमी" पर्व महा।।
उसी ज्ञान की अविरल धारा, ग्रन्थों में चलती आई।
णमोकार का आश्रय लेकर, शास्त्रों में ढलती आई।।12।।

अर्हन्तों की ॐ ध्वनि का, द्वादशांग में सार है।
तीर्थंकर परमेष्ठी वाणी, करती जग उद्धार है।।
जिनवाणी का अक्षर अक्षर, मंत्र रूप हो जाता है।
पत्रों पर अंकित होकर के, द्रव्य ग्रन्थ कहलाता है।।13।।

आगम के त्रय अक्षर हमको, "आप्त" ध्वनि बतलाते हैं।
"गणधर" द्वारा भाव ग्रन्थ रच, द्वादशांग कह जाते हैं।।
म अक्षर "मुनियों" का वाचक, द्रव्य ग्रन्थ प्रस्तुत कर्ता।
षट्खण्डागम् जय हो तेरी, पूजा कर सब दुख हर्ता।।14।।

सरस्वती जिनवाणी माता, हंस वाहिनी नाम तेरा।
तिमिर हारिणी ब्रह्मचारिणी, वाग्वादिनी नमन मेरा।।
जिनवाणी के जिनवचनों की, निज वचनों से गुण गाऊँ।
द्वादशांग मय 'सौरभ सागर', ज्ञानानन्द में खो जाऊँ।।15।।

दोहा

जिनवाणी जिनदेव की, दिव्यध्वनि सुखकार।
सम्यक ज्ञान बढ़े सदा, गा गा मंगलाचार।।

वीर-वीरांगज वन्दना

दोहा– चौथे काल के अन्त में, वीर गए निज धाम।
गौतम जम्बू मुनि सुधर्मा, अनुबद्ध केवली नाम।।
ध्यान लगा वन्दन करूँ, श्रद्धा मन में लाए।
मुनिवर की शुभ श्रृंखला, वीरांगज तक पाए।।
मुनिराज की वन्दना पुण्यवान कर पाए।
मिथ्यादृष्टि जीव तो फेर मुखो को जाए।।

जिनवर के लघुनन्दन मुनिवर, परिषह जयते अविकारी।
महाव्रतों की करें साधना, परमेष्ठी पद के धारी।।
ज्ञान ध्यान तप आराधन में, लीन रहे मुनि करुणाधार।
आह्वानन स्थापन करता, हृदयांगन में करो विहार।।1।।

तीर्थंकर का सूरज जग में, मावस को निज घर पहुँचा।
मुनिवर का दीपक दर्शन कर, सारे जग का मन चहका।।
गणधर मुनिवर के दर्शन पा, माह चवालीस बीत गए।
गौतम जम्बू सुधर्मा पा, तीर्थंकर से रीत गए।।2।।

तीन घटाकर नौ करोड़ की, संख्या मुनिवर की जानो।
धरती पर जीवन्त जिनेश्वर, उन पर श्रद्धा हित मानो।।
तपसी जल से भिन्न कमल वत्, जीवन अपना जीते हैं।
ढाई द्वीप के मुनिराज की, चरण वन्दना करते हैं।।3।।

विष्णु नन्दिमित्र अपराजित, गोवर्धन पावन मुनिराज।
सम्पूरण श्रुत पारगामी वें, निर्मल परिणामी ऋषिराज।।
पंचम युग में महाज्ञान पा, परोक्ष केवली कहलाए।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, श्रुत केवली मन भाएँ।।4।।

भद्रबाहु तपसी महायोगी, भद्रभाव के धारी थे।
चन्द्र गुप्त के गुरुवर प्यारे, मोक्ष मार्ग अधिकारी थे।।
श्रुत केवली की पदवी पाकर, पंचम काल विहार किया।
श्रवण बेल गोला पर्वत पर, संल्लेखना स्वीकार किया।।5।।

ऋद्धि सिद्धि से परिपूरित, दशम पूर्वधारी मुनिराज।
नाम विशाखा प्रोष्टिल क्षत्रिय, श्री जय नाग सिद्धार्थ विराज॥
धृतिषेण श्री विजय मुनिशा, बुद्धिल गंगदेव यति।
धर्मसेन एकादश मुनिवर, अर्घ चढ़ावें जैनमति॥6॥

आत्माराधक ज्ञानी मुनिवर, ग्यारह अंग के धारी थे।
पूज्य श्री नक्षत्र नाम अरुँ, श्री जयपाल अविकारी थे॥
पाण्डव साधक श्री ध्रुवसेना, कंसाचार्य महा हितकार।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, बुद्धि शुद्धि निज उद्धार॥7॥

सूक्ष्म ज्ञान और शुद्ध ज्ञान से, जगति का कल्याण करें।
मुनिवर हैं सुभद्र यशोभद्र, भद्रबाहु गुणगान करें॥
लोहाचार्य प्रशंसित संता, जैनमार्ग विस्तार किया।
दश नव अठ अंगों के धारी, अर्घ चढ़ा मनुहार किया॥8॥

विनय श्री शिव अर्हददत्ता, रागद्वेष से दूर रहें।
अंग पूर्व के ज्ञाता वाग्मी, ज्ञानध्यान रसपूर रहे॥
गुणधर माघनन्दि मुनिराजा, नित्य भ्रमण होता रहता।
दर्शन पूजन चर्या भक्ति, आराधन का मन करता॥9॥

महिमा नगरी में संतों का, सम्मेलन था करवाया।
प्रतिक्रमण युग करवा करके, संघ भेद का यश पाया।
नन्दी वीर या पंचस्तूपा, सेनभद्र सिंह चन्द्र कहो।
वृहद् संघ के नायक मुनिवर, जैन धर्म के सन्त अहो॥10॥

काल बीतते समय लगे ना, बीता छः सौ वर्ष बढ़ा।
चिन्ता जागी गुरु धरसेना, श्रुत रक्षा का भाव जगा॥
अर्हतबली से शिष्य बुलाकर, उनको सारा ज्ञान दिया।
अंगधारी आचार्य नमूं मैं, चरण कमल में अर्घ चढ़ा॥11॥

वीर प्रभु की दिव्य ध्वनि का, गणधर गुम्फित ग्रंन्थ महा।
पुष्पदन्त ने लिपिबद्ध कर, णमोकार महामंत्र कहा।।
ऋषि सभा के अधिपति बनकर, उच्चासन को पाया है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, षट्खण्डागम पाया है।।12।।

पुष्पदन्त मुनि धरे समाधि, भूतबलि मन अकुलाया।
एक वृक्ष के दो डाली हम, सिद्धान्तों का फल पाया।।
पूर्ण किया षट्खण्डागम को, श्रुत पंचमी का पर्व चला।
पुष्पदन्त अरु भूतबली को, अर्घ चढ़ा मन पुष्प खिला।।13।।

इनकी शक्ति युक्ति लखकर, लेखन क्रम आरंभ हुआ।
अंग ज्ञान से रहित मुनिश्वर, गाथा टीका सूत्र कहा।।
कुन्द कुन्द अरुँ वीरसेन ने, गाथा टीका रच डाला।
अर्घ चढ़ा मुनि ग्रंथ शृंखला, गाऊँ पावन गुणमाला।।14।।

उमास्वामी पद्मनन्दी अरुँ, यतिवृषभ आचार्य हुए।
शिवकोटि वसुनन्दी नेमि, अमृतचन्द्र कई कार्य किए।।
जिन जय नय रविसेन कहें, या विद्यानन्दी श्री आचार्य।
प्रभाचन्द्र या कुमुदचन्द्र मुनि, अर्घ चढ़ा पुरण शुभ कार्य।।15।।

धैर्यवान अकलंक मुनिशा, न्याय शास्त्र का ज्ञान दिया।
मिथ्या मत की जड़ें काटकर, जैन धर्म विस्तार किया।।
समंतभद्र ने धर्म ध्वजा ले, पाखण्डी मद चूर किया।
मानतुंग मुनि भक्तामर रच, भक्ति भाव भरपूर दिया।।16।।

जैन मुनि शुभचन्द्र देव ने, तप बल से सिद्धि पाई।
चरण धूलि छिड़का पत्थर पर, स्वर्ण बना विस्मित भाई।।
वादिराज ने भक्ति करके, तन का कोढ़ मिटाया है।
पूज्यपाद ने दृष्टि पाने, शान्ति भक्ति रचाया है।।17।।

अमित गति योगीन्दु स्वामी, जिनवाणी रसघोल रहे।
सिंह नन्दि गुणभद्रा स्वामी, मन की गाँठें खोल रहें।।
स्वामी कार्तिकेय मुनि का, वैरागी मन पावन है।
पंचम युग के मुनिराज जी, ज्येष्ठ मास में सावन है।।18।।

मुनिमार्ग की निर्मल गंगा, अविरल बहती आई है।
ग्रंथ रचे निर्ग्रन्थ रचे, अरहन्त प्रतिष्ठा कराई है।।
त्याग मार्ग पर लाखों मुनिवर, चल कर निज कल्याण किया।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, जैन धर्म पहचान दिया।।19।।

मुनिकुंजर थे आदिसागर, शान्तिसागर मुनिमहान।
महावीरकीर्ति जी मुनिवर, मंत्रों के ज्ञाता विद्वान।।
विमल सिन्धु कई बात बताकर, निमित्त ज्ञानी बनकर उभरे।
पुष्पदन्त गुरुराज हमारे, चरण नमूँ जीवन सुधरे।।20।।

वर्तमान के मुनि आचारज, उपाध्याय का वन्दन है।
मोक्ष मार्ग पर चलने वाले, सन्तों का अभिनन्दन है।।
इनके दर्शन कलिकाल में, पुण्यवान को होते हैं।
सेवा भक्ति पूजन अर्चन, करके धर्म संजोते हैं।।21।।

पंच प्रकारे मुनिवर प्यारे, पंचम गति के साधक हैं।
पंच महाव्रत धारण करते, जगति के उद्धारक हैं।।
परिणामों की शुद्धि हेतु, बहुविध भक्ति करता हूँ।
मोक्षमार्ग पर गमन करूँ मैं, यही प्रार्थना करता हूँ।।22।।

दोहा

मुनिराज की साधना, सर्व जीव सुखदाय।
'सौरभसागर' नित नमें, सम्यग्दर्शन पाय।।

जीवन परिचय

मुनि श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज

जन्म	: कार्तिक कृष्णपक्ष अष्टमी (गुरुवार) 22 अक्टूबर, 1970 जसपुरनगर (छत्तीसगढ़)
बचपन का नाम	: सुरेन्द्र कुमार जैन
पिता का नाम	: श्री श्रीपाल जैन
माता का नाम	: श्रीमती चन्द्रप्रभा जैन
गृहत्याग	: शुक्रवार, 08 अप्रैल, 1983
क्षुल्लक दीक्षा	: शुक्रवार, 17 जनवरी 1986, छत्तरपुर (एम.पी.)
ऐलक दीक्षा	: सोमवार, 27 जून 1988 अंदेश्वर पार्श्वनाथ (राज.)
मुनि दीक्षा	: 21 सितम्बर, 1994 इटावा (उत्तर प्रदेश)
दीक्षा गुरु	: पुष्पगिरि प्रणेता आचार्य श्री पुष्पदंतसागरजी महाराज
आचार्य पद	: 10-04-2022 पुष्पगिरी
राजकीय अतिथि	: झारखंड, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखंड

विशेष कृति :

1. सिद्धान्त शतक
2. जैनत्व का बोध
3. धर्म गगन में करें विहार
4. प्रेरक प्रवचन
5. फैशन एक अभिशाप
6. शूलों की सेज
7. दहकते अंगारे
8. आओ लौट चलें
9. पत्थर की मानवाकृति
10. प्रतिमा से प्रतिभा जगे
11. सृजन के द्वार पर
12. हे इन्सान! मत बन तू शैतान
13. जैन शिक्षा भाग-1, 2, 3, 4
14. आराध्य आराधना
15. मंगलं पुष्पदन्ताद्यो
16. जैनाचार संहिता
17. श्रावकाचार संहिता
18. श्रमणाचार संहिता विधान
19. श्री भक्तामर स्तोत्र-1
20. श्री कल्याण मन्दिर-2
21. श्री स्वयंभू चौबीसी-3
22. श्री मंशापूर्ण महावीर-4
23. चौंसठ ऋद्धि सिद्धि-5
25. श्री सम्मेदशिखर-6
26. माँ जिनवाणी-7
27. कर्मदहन-8
29. श्री नवग्रह जिन-9
24. आचार्य पुष्पदन्तसागर-10
25. जैन विधान संग्रह
26. भक्ति-सौरभ

विधान पुस्तक प्राप्ति हेतु सम्पर्क करें–मनोज जैन, 9810056286

:: पुण्याजक ::

मनोज कुमार जैन, ललित जैन, अतिशय जैन, अर्पण जैन
मै. पारसनाथ पोली बटन, दिल्ली-110031 मो.: 9810056286

मुकेश जैन बालेश जैन (सोनिया टैक्सटाईल)
बिहारी कॉलोनी, दिल्ली

श्री शिवसेन जैन, पंकज जैन, धीरज जैन
मौजपुर, दिल्ली

श्री संजय जैन, श्रीमती रेणु जैन, अनिल जैन, श्वेता जैन
दिल्ली

विपुल जैन (चिलकाना वाले)
शंकर नगर, दिल्ली

श्री सुभाष चन्द जैन, अचिन जैन, अंकित जैन
बलबीर नगर, दिल्ली

प्रवीण जैन, दीपक जैन, अक्षत जैन (खेकड़ा वाले)
बलबीर नगर, दिल्ली

पवन जैन गौरव जैन निक्षेप जैन (शामली वाले)
महावीर ओवरसीज, दिल्ली

सतीश जैन देवेश जैन (ककडीपुर वाले)
लक्ष्मी नगर, दिल्ली

उमेश जैन सीमा जैन
कृष्णा नगर, दिल्ली

सचिन जैन, विकास जैन, गौरव जैन
ईस्ट आज़ाद नगर, दिल्ली

विकास जैन निधि जैन
राजगढ़ कॉलोनी, दिल्ली

पुष्पगिरी तीर्थ पर पूज्य गुरुदेव की प्रेरणा से निर्मित वेदिया एवं जिनालय

तीर्थंकर श्री पुष्पदन्त भगवान का भव्य सीपाकार मंदिर (पुष्पगिरी तीर्थ)

आशीर्वाद : प. पू. गणाचार्य
श्री 108 पुष्पदंतसागर जी महाराज

प्रेरणा : संस्कार प्रणेता ज्ञानयोगी
मुनिश्री सौरभसागर जी महाराज